# जैन जीवन

—: सम्पादक :—

बचन लाल जैन
M A, B.T.

—: प्रकाशक :—

शिव नारायण जैन
भटिंडा (पंजाब)

भगत राम जैन
राम पुरा (फूल मंडी)

पन्ना लाल जैन, नाभा।

# भूमिका

कोई व्यक्ति अपनी मुट्ठी में रंग लेकर कहता है कि मेरी मुट्ठी में हाथी है, घोड़ा है, बिल्ली है और बाघ है । इस कथन से प्रायः सभी लोगों को आश्चर्य होगा कि यह क्या पागल की सी बातें बना रहा है । लेकिन वही मनुष्य उस रंग को पानी में घोल कर, एक तूलिका से कागज के ऊपर हाथी का आकार बना कर पूछता है कि यह क्या है? तो तीन साल का बालक भी बोल देगा, 'यह हाथी है' समझो ! चरित्र चित्रण इसी का नाम है, द्रव्यानुयोग की गहरी बात भी उदाहरण, दृष्टान्त और युक्ति द्वारा सहसा गले उतर जाती है । इसी लिये तो अनुयोग चतुष्टय में धर्मकथानुयोग को स्थान मिला है ।

नन्हे-नन्हे बालक भी अपनी दादी-माता को प्रायः सोने के समय कहते ही रहते हैं कि हमें कोई कहानी सुनाओ तब वह कथायें सुनाती हैं और बच्चे बड़ी दिलचस्पी से सुनते हैं, यथार्थ देखा जाये तो ये कहानियाँ बालकों का जीवन बनाती हैं, मूलभूत-संस्कार डालती हैं और उनका भविष्य तद्रूप संस्कारों में फलित होता है, अतः आख्यायिकाएं बहुत उपयोगी मानी गई हैं ।

आख्यायिकाएं दो प्रकार की होती हैं एक ऐतिहासिक और दूसरी काल्पनिक वैसे यथास्थान दोनों ही उपयोगी हैं, लेकिन विशिष्ट-ऐतिहासिक घटनायें तो बाल्य में गहरी छाप डालती हैं और नवजीवन का निर्माण करती हैं ।

इस पुस्तक में जो जैन जगत में प्रसिद्ध शिक्षाप्रद, सुरुचिर वैराग्य से ओतप्रोत नैतिक और धार्मिक जीवन को उद्बोधन करने वाली आख्यायिकाओं का श्री "धनराज जी" स्वामी (जो एक कुशल

कवि हैं और श्री भिक्षुशासन में सर्व प्रथम शतावधानी हैं)द्वारा अतिसरल भाषा में एवं सक्षिप्त सकलन करने का एक सुन्दर प्रयास किया गया है ।

विशेषता तो यह है कि महाभारत जैसे कथा सागर को आप ने गागर में ही भर दिया है । श्री महावीर की जीवन कथा, प्रभु अरिष्टनेमी का उत्कृष्ट त्याग, श्री गजसुकुमाल का अडोल धैर्य आदि अनेक उज्ज्वल जीवन–प्रसग इस पुस्तक में बडी खूबी से चित्रित किये गये हैं ।

अतः यह पुस्तक नव पाठको के लिये व इतिहास प्रेमियो के लिये बडी उपयोगी व प्रेरणादायक साबित होगी ऐसी मेरी दृढ धारणा है ।

–: निवेदक :–

रामस्वरूप जैन

बी० ए० एल० एल० बी०

मालेरकोटला (पजाब)

# प्राक्कथन

जिस किसी भी धर्म को जो कोई मानता हो, उस व्यक्ति के लिए उस धर्म का इतिहास जानना परम आवश्यक है। जैन धर्म का क्या अर्थ है? जैन के मूल सिद्धान्त कौन २ से हैं? जैन धर्म के मुख्य प्रवर्तक कौन थे? इस समय कौन से तीर्थंकर का शासन चल रहा है? तथा किस तीर्थंकर के शासन काल में विशेष व्यक्ति कौन थे? उपरोक्त प्रश्न यदि किसी जैनी भाई से कोई पूछ ले और वह यथार्थ उत्तर नहीं दे सके तो उसके लिए कितनी बड़ी विचारने की बात है? अस्तु—

इसी बात को लक्ष्य करके इस "जैन जीवन" नाम की पुस्तक का निर्माण हुआ है। यद्यपि श्री आदि नाथ पुराण, हरिवंश पुराण, महाभारत एवं श्री महावीर चरित्र आदि अनेक प्राचीन जैन ग्रन्थ बनाए हुए विद्यमान हैं, फिर भी बहुत से पूर्वाचार्यों के विचार विस्तार में होने के कारण उनका पढ़ना और समझना हर एक आदमी के लिए अत्यन्त कठिन है।

## इस में क्या है?

कहानियां दो तरह की होती हैं एक तो बनी हुई और दूसरी बनाई हुई। यद्यपि अहिंसा आदि तत्व को समझाने के लिए अपनी बुद्धि से बनाई हुई कहानिया भी सत्य हैं, फिर भी बनी हुई घटना का महत्त्व कुछ और ही होता है। इस पुस्तक में लिखी हुई बाते ऐतिहासिक हैं और प्राचीन जैन ग्रन्थो से प्रामाणित हैं अत नि सदेह महत्वपूर्ण हैं!

## प्रेरणा और उपकार

आचार्य श्री तुलसी बार बार यही प्रेरणा दिया करते हैं कि प्रामाणिक साहित्य सर्जन जितना भी अधिक हो उतना ही धर्म प्रचार विशेष रूप से होगा। सम्भव है इसी पावन प्रेरणा से यह पुस्तक तैयार हुई। आशा ही नही, अपितु दृढ विश्वास है कि धर्म के जिज्ञासु लोग इसे पढ़ कर अवश्य लाभ उठायेंगे और मेरे प्रयास को सफल बनायेंगे।

**धन मुनि**

# अनुक्रम

प्रसङ्ग पहला

# श्री भगवान् ऋषभदेव

बहुत से लोग सुनी सुनाई बात कह देते हैं कि जैनधर्म पार्श्वनाथ तथा महावीर स्वामी का चलाया हुआ है ! जो अभी तीन हजार वर्षों के अन्दर ही हुए हैं। यह कथन बिल्कुल असत्य है, क्योंकि जैन-धर्म के आद्य-प्रवर्तक भगवान् ऋषभनाथ थे। वह आज से असंख्य वर्ष पूर्व तीसरे आरे में हुए थे। सब से पहले राजा होने के कारण वे आदिनाथ भी कहे जाने लगे।

## युगलों का जमाना

उनसे पहले राजा-प्रजा का कोई हिसाब नहीं था क्योंकि युगल-धर्म चल रहा था। जीवन भर में पति-पत्नी केवल एक पुत्र-पुत्री को युगल रूप से उत्पन्न करते थे और ४६, ६४ एवं ७६ दिन उन्हें पाल कर एक ही साथ छींक एवं जंभाई द्वारा मर कर स्वर्ग में चले जाते थे एवं पीछे से वही जोड़ा पति-पत्नी के रूप में परिणत हो जाता था। उस समय असि, मसी, कृषि, शिल्प एवं वाणिज्य रूप कर्म कोई भी नहीं करता था। जिस किसी भी वस्तु की आव-श्यकता होती थी, स्वाभाविक कल्प—वृक्षों द्वारा पूरी की जाती थी।

## श्री ऋषभनाथ का जन्म

काल के प्रभाव से क्रमशः कल्प-वृक्षों की शक्ति में कमी होने लगी और युगलों में ईर्ष्या द्वेष एवं कलह विशेष रूप से बढ़ने लगे। तब सात कुलकर (मुखिया) स्थापित किये गये, उन्होंने हकार, मकार तथा

धिक्कार ऐसे तीन दण्ड चलाए, लेकिन कुछ समय के वाद उनका भी उल्लघन हो गया, और लडाई-झगडे वहुत ही वढ गये। उस सयय *नाभि* नामक सातवें कुलकर की पत्नि *मरुदेवी* की कुक्षि से भगवान् ऋषभ ने जन्म लिया। यह समय अकर्मभूमि मनुष्यो को कर्मभूमि वनाने की कोशिश कर रहा था एवं युगल–धर्म को वदल रहा था।

## परिवर्तन

अव से पहले किसी का विवाह नही होता था किन्तु भगवान् ऋषभ का दो कन्याओ से पाणिग्रहण हुआ।

आगे कोई राजा नही होता था परन्तु ऋषभ का राज्याभिषेक किया गया और वे आदि-नरेश कहलाए।

युगलो के समय मात्र एक जोडा पुत्र–पुत्री उत्पन्न होता था लेकिन ऋषभदेव के भरत–वाहुवलि आदि १०० पुत्र तथा व्राह्मी और सुन्दरी ऐसे दो पुत्रियाँ हुईं।

युगलो का कोई वश नही होता था परन्तु वाल्यावस्था मे प्रभु को इक्षु विशेष प्रिय होने से उनका *इक्ष्वाकुवंश* कहलाया आगे चल कर उसी का नाम सूर्यवश एव रघुवंश हो गया। श्री राम–लक्ष्मण भी इसी वश मे हुए थे।

भगवान् ऋषभदेव ने तिरासी लाख पूर्व तक अयोध्या नगरी मे राज्य किया एव जगत् मे राजनीति और ससारनीति का प्रचार किया।

## लोकों का भोलापन

उस जमाने के आदमी बहुत भोले–भाले थे और उनमे ज्ञान की काफी कमी थी। कल्प–वृक्ष क्षीण होने से स्वाभाविक अनाज उत्पन्न हुआ, अज्ञानवश भोले आदमी उसे पशुओ की तरह चर गये, अतः सारे

विशूचिका रोग से पीड़ित हो गये। फिर प्रभु के कहने से अनाज निकालने लगे, तो मुँह खुला होने से बैल उसे खाने लगे। प्रभु ने कहा बैलों के मुँह बांध दो, उन्हों ने मुंह बांध तो दिए किन्तु काम पूरा होने पर भी खोलना नहीं जानते थे. बारह घड़ी तक बैल भूखे-प्यासे ही खड़े रहे। फिर पता लगने पर प्रभु ने उनके मुँह खुलवाए।

जंगल में स्वाभाविक आग पैदा हुई। रत्न समझ कर लोग उसे लेने दौड़े। सब के हाथ पैर आदि जल गये। प्रभु ने कहा, यह आग है, इसमें अनाज को पकाओ। बस, कहने की ही देरी थी वनोत्पन्न अनाज आग में डाल दिया गया, किन्तु नहीं निकालने से वह भस्म हो गया। तब प्रभु ने खुद मिट्टी का बर्तन बना कर लोगों को बर्तन बनाना सिखलाया। उस दिन से लोग बर्तनों मे अनाज पका कर खाने लगे। ऐसे जिस-जिस काम की आवश्यकता होती गई, भगवान् बतलाते गये एवं उसका विस्तार जगत् में होता गया।

## दीक्षा और अन्तराय कर्म

संसार-नीति की शिक्षा दे कर विश्व को धर्मनीति सिखलाने के लिये चार हजार पुरुषों के साथ प्रभु ने दीक्षा ली, किन्तु अन्तराय-कर्मवश बारह महीनों तक अन्न-पानी नहीं मिला। कोई हाथी-घोड़ा हाजिर करता था तो कोई सोना-चाँदी-हीरे-पन्ने आदि धन लेने की प्रार्थना करता था तथा कोई चोटी पकाने के लिये कुंवारी कन्या स्वीकार, ऐसे कहता था, लेकिन रोटी-पानी लेने के लिये कोई भी नहीं कहता था, कारण, प्रभु से पहले कोई भिक्षुक था ही नहीं।

## अनेकमत

भूख-प्यास से पीड़ित हो कर मारे के मारे चेले भाग गये। कोई कन्दआहारी तापस बन गया, तो कोई बन गया फलाहारी। कोई

एकदण्डी हो गया, तो कोई द्विदण्डी। ऐसे अनेक मतो का प्रादुर्भाव हो गया।

## अक्षय तृतीया

एक वर्ष के बाद बाहुबलि के पौत्र *श्रेयांसकुमार* ने जाति स्मरणज्ञान द्वारा भिक्षा की विधि जान कर प्रभु को इक्षु–रस से पारणा करवाया। वह दिन *अक्षयतृतीया* ( इक्षु तीज ) कहलाया। एक हज़ार वर्ष की घोर–तपस्या के बाद प्रभु ने केवल–ज्ञानी बन कर चारतीर्थ स्थापन किये। *ऋषभसेन* आदि ८४००० साधु हुए, ब्राह्मी आदि ३००००० साध्वियाँ हुईं, साढे तीन लाख श्रावक हुए और पांच लाख चौवन हज़ार श्राविकाएँ हुईं, माघ कृष्ण त्रयोदशी के दिन प्रभु दस हज़ार साधुओ के साथ *कैलाश–पर्वत* पर मुक्ति मे पधारे।

—:०:—

प्रसङ्ग दूसरा

# श्री मरुदेवी-माता की मुक्ति

श्री मरुदेवी माता ने बाह्य-रूप से न तो कोई त्याग किया और न कोई तपस्या ही की। तपस्या क्या ? साधु का बाना भी नहीं लिया, फिर भी भावविशुद्धि से हाथी के हौदे पर बैठी-बैठी ही सिद्ध बन गईं। ऋषभदेव भगवान् ने एक हजार वर्ष तपस्या करके केवल-ज्ञान प्राप्त किया। इधर माताजी पुत्र-विरह से बहुत व्याकुल हो रही थी, कारण उन्हें इनका कोई समाचार नहीं मिला था।

दादीजी के दर्शनार्थ एक दिन चक्रवर्ती—भरत आए और उनसे उदासीनता का कारण पूछा। गद् गद् स्वर से दादी ने कहा—बेटा ! तुझे क्या फिक्र है, हमारा चाहे कुछ भी हो ! तू तो चक्रवर्ती के पद में फूल रहा है और राज्य के आनन्द में मग्न हो रहा है। मेरा इकलौता-पुत्र जो घर से निकल कर साधु बना था, उसे एक हजार वर्ष हो गए। क्या तूने कभी उसका पता लिया है ? वह कहाँ रहता है ? क्या खाता है ? सर्दी, गर्मी और बरसात से उसे कौन बचाता है ? मैं उसको पास बिठा कर अपने हाथों से खिलाती थी, पिलाती थी, एवं हर तरह से उसकी रक्षा करती थी। अब वह मेरा बेटा भूखा-प्यासा कहीं जंगलों में भटकता होगा, कौन पूछे उसका सुख और कौन करे उसकी सम्भाल !

## वे परम आनन्द में हैं

दादी जी ! आप के पुत्र सर्वज्ञ भगवान् बन गये हैं और वे परम–

आनन्द मे हैं। जब वे यहाँ पधारें तब आप देखना उनके ठाट-बाट। पुत्र के समाचार सुन कर माताजी के हर्ष का पार नही रहा। समयान्तर भगवान् वहाँ पधारे, समवसरण की रचना हुई एव इन्द्र आदि देवता दर्शनार्थ आए। भरतजी ने दादीजी को भगवान् के पधारने की बधाई दी। माता मरुदेवी ने मंगल-गान शुरू करवाए एवं भरत आदि पोते, पडपोते, लडपोते तथा उनकी रानियो एवं अनेक दास-दासियो के परिवार से वह हाथी पर चढ कर भगवान् के दर्शनार्थ चल पडीं।

## उपालम्भ

दूर से ज्यों ही माताजी ने पुत्र के दर्शन किए, वह मोह मे मग्न होकर ऐसे उलाहना देने लगी। अरे बेटा ! मैं तो तेरे लिए दिनरात रो रही थी किन्तु तू तो मुझे कभी याद ही नही करता, एक चार आगुल की चिट्ठी लिखने की भी तुझे फुर्सत नही मिलती, बेटा तू तो सुख में माँ को ही भूल गया। हा ! हा ! भूलना ही था। तुझे मेरी क्या गर्ज। सिर पर तेरे तीन छत्र हैं, चामर बीजें जा रहे हैं, ऊपर *अशोकवृक्ष* है, बैठने के लिए *स्फटिकसिंहासन* है और इन्द्र-इन्द्राणी हाथ जोड कर तेरी सेवा कर रहे हैं। अब माँ की याद आए भी तो कैसे !

## केवल ज्ञान

ऐसे मोह विलाप करते-करते ही विचार बदले और सोचने लगी ये तो वीतराग भगवान् हैं, इनके क्या माँ और क्या बेटा ! यूं ही मोह मे पागल हो रही हूँ। बस, क्षपक-श्रेणी चढ़ गई और हाथी पर बैठी-बैठी ही केवल-ज्ञान पा कर माताजी मोक्ष पधार

गई। भगवान् ने व्याख्यान में फरमाया कि मरुदेवी माता मुक्त हो गई। भरतजी पलक पर दादी को सम्भालने लगे तो मात्र शरीर ही मिला। बड़ा भारी आश्चर्यजनक दृश्य था। लोग कहने लगे कि पुत्र हो तो ऐसे ही हो। एक हजार वर्ष की घोर-तपस्या में जो अनमोल ज्ञानरत्न प्राप्त किया, वह सर्व-प्रथम अपनी परम-पूज्य माताजी को भेंट कर दिया एवं उन्हें अनन्त मुक्ति-सुखों में भेजा।

प्रसङ्ग तीसरा

# मुट्ठी कहाँ की कहाँ (बाहुबलि)

चढते यौवन मे काम को जीतना जितना महत्व रखता है, उतना वृद्ध-अवस्था मे नही रखता। धन स्वजन एवं विजय के सद्भाव में साधु बनना जितना मुश्किल कहलाता है, इन सब चीजों के अभाव मे साधु बनना उतना मुश्किल नही कहा जा सकता। हार कर तो हर एक घर से निकल पड़ता है, परन्तु जीत कर त्याग करने वाले महापुरुष तो *बाहुबलि* जैसे विरले ही होंगे।

भगवान् ऋषभदेव के सौ पुत्र थे। उनमे भरत और बाहुबलि दो मुख्य थे। प्रभु ने भरत को अपनी गद्दी दी, बाहुबलि को *तक्षशिला* का राज्य दिया और शेष ९८ पुत्रो को भी यथा योग्य कुछ देकर स्वयं साधु बन गये।

भरत चक्रवर्ती थे, अतः उन्हों ने सारे भरत-क्षेत्र में अपनी आज्ञा स्थापित की। अठयानवें भाइयो ने भरत की सत्ता को स्वीकार न करके प्रभु के पास दीक्षा ले ली। जब बाहुबलि को आज्ञा मानने के लिये कहा गया तो वे नहीं माने। तब दोनों भाइयो का बारह साल भीषण संग्राम हुआ। खून की नदियाँ बह चलीं फिर भी कोई निपटारा नहीं हो सका।

## पांच युद्ध

मानव-सृष्टि के प्रारम्भ मे ही ऐसा प्रलय देख कर देवता बीच में दोनो को ज्यों त्यों समझा कर ये पाँच युद्ध निश्चित किये।

रदस्त जवाब दिया कि चक्रवर्ती कण्ठ तक पृथ्वी मे प्रविष्ट हो गये एवं देवो द्वारा उनकी हार घोषित कर दी गई।

## मर्यादा का भंग

हार का दुःख न सह सकने के कारण भरत ने अपनी मर्यादा का भग कर के बाहुबलि को मारने के लिये चक्र चलाया, लेकिन दिव्य-चक्र ने उनका वध नही किया प्रत्युत उन्हें प्रणाम करके लौट गया। यह देखकर बाहुबलि के क्रोध का पारावार नही रहा और वे विकराल काल-रूप बन कर मुष्टि घुमाते हुए भरत को मारने चले। देवो ने पैर पकड कर उन्हें शान्त किया, तब वे बोले मेरी मुष्टि खाली नहीं जा सकती। लो! भरत के सिर के बदले मैं इसे अपने ही सिर पर रखता हूँ, ऐसे कह कर वही पर पँचमुष्टि लोच कर लिया और साधु बन कर ध्यानस्थ हो गये। अब भरत की आंखें खुलीं और उन्होने भाई के चरण छू कर विनम्र शब्दो मे कहा—भाई क्षमा करो, मेरी तुच्छता को भूल जाओ और राज्य मे चलो। लेकिन उन्हें राज्य में अब क्या चलना था, उन्होंने तो त्याग कर दिया सो कर ही दिया। धन्य है महाबली-बाहुबलि के आदर्श-त्याग को।

—:※:—

## प्रसङ्ग चौथा

# हाथी से उतरो

जो काम लोहे का तीर नहीं कर सकता, वह काम वचन का तीर कर जाता है। शीर्षक में दिये हुए "हाथी से उतरो" इस वाक्य ने क्या ही कमाल कर दिया, एक अकड़े हुए महामुनि को झुका दिया और सर्वज्ञ भगवान बना दिया। क्या आप जानते हैं कि वे महामुनि श्री बाहुबलि थे और वचन का तीर मारने वाली महा सतियाँ थीं *ब्राह्मी* और *सुन्दरी* ?

## सुन्दरी की तपस्या

भगवान् ऋषभदेव को केवल ज्ञान होते ही ब्राह्मी और सुन्दरी दीक्षा लेने लगीं किन्तु भरत-राजा ने अति सुन्दरता के कारण सुन्दरी को आज्ञा नहीं दी एवं उस से विवाह करना चाहा। सुन्दरी ने विवाह करने से साफ इन्कार कर दिया। फिर भी भरत नहीं माने और उसे अपने महलों में रख कर स्वयं दिग्विजयार्थ चले गये। भरतक्षेत्र की विजय करने में उन्हें साठ हजार वर्ष लगे। पीछे से सुन्दरी ने छट्ठ-छट्ठ—तपस्या शुरू कर दी। घोर-तपस्या के कारण उसका शरीर बिल्कुल निस्तेज-सौन्दर्य हीन एवं क्षीण हो गया। चक्रवर्ती भरत जब वापस आए तो उन्होंने उसे मात्र अस्थि-पिंजर देखा, पर देखते ही उनका विकार शान्त हो गया और सुन्दरी को दीक्षा की अनुमति दे दी गई, वह साध्वी बन कर आत्म-साधना करने लगी।

## गुफा में श्री बाहुबलि

इधर श्री बाहुबलि युद्ध से विरक्त होकर संयमी हो गये किन्तु

अभिमान रूप हाथी से नही उतर सके। उन्हो ने सोचा यदि भगवान् के पास जाऊँगा तो छोटे भाई जो मेरे से पहले साधु बने हैं, उन्हें नमस्कार करना पडेगा। ऐसा विचार करके वे एक गुफा मे जा कर ध्यानस्थ हो गये। स्तम्भाकार खडे-खडे उनको एक वर्ष बीत गया, उनके शरीर पर बेलियाँ छा गईं, पक्षियो ने घोसले बना लिए, सांप लटकने लगे तथा हाथी, सिह, चीते वगैरह कोई खम्भा समझ कर उसका सहारा लेने लगे एवं अपने शरीर को खुजलाने लगे।

## भाई हाथी से उतरो

इतना कुछ होने पर भी महामुनि मेरुवत्-निश्चल रहे, फिर भी केवल-ज्ञान नही हुआ। एक दिन अकस्मात् आवाज आई *भाई ! हाथी से उतरो* अन्यथा मुक्ति नहीं मिलेगी। सुनते ही मुनि चमके और विचार करने लगे। अरे ! यह क्या? कहा है हाथी ? मैं तो साधु हू,और एक वर्ष से भूखा—प्यासा खडा हू,इधर कहने वाली भी ब्राह्मी और सुन्दरी है। जो साध्वियाँ है अत असत्य तो बोल ही नही सकती। बस, समझ गये और मान-हाथी से उतर कर अपने छोटे भाइयो को वन्दना करने लगे कि वही पर उन्हें केवल-ज्ञान हो गया। फिर भगवान् के दर्शन किये एवं अत मे मुक्तिधाम को प्राप्त हुए।

—※—

पालन भी पूरे ध्यान से करते थे । लेकिन यह सब काम उनके लिए मात्र नट की तरह पार्ट अदा करना था ।

## अनासक्ति की पराकाष्ठा

उनकी अनासक्ति बढ़ती-बढ़ती इतनी बढ़ गई थी कि एक दिन वे अपने काँच के महल मे वस्त्र निकाल कर नहाने लगे । उस समय उनको अपना शरीर नग्न-सा प्रतीत हुआ, मात्र एक अँगुली जिस मे मुद्रिका पहनी हुई थी, सुन्दर लगी । अंगुली से मुद्रिका हटा ली तो वह भी नंगी हो गई । फिर सारे वस्त्राभूषण धारण कर लिए तो शरीर पूर्ववत् सुन्दर लगने लगा । फिर निकाल दिए तो असुन्दर लगने लगा । बस, कुछ समय यही काम चालू रहा । अन्त में उन्हे विश्वास हो गया कि शरीर तो असुन्दर और नग्न ही है यह शोभा ऊपर के पदार्थों की है । अत इस शरीर का मोह करके आत्मा को भूल जाना अज्ञान के सिवा और कुछ नही है । चक्रवर्ती ऐसा विचार करते-करते शुक्ल ध्यान मे जुड गये और घन-घाती कर्मों का नाश करके उसी काच के महल में केवल ज्ञानी बन गये । वास्तव मे जो अनासक्त भाव से काम करते हैं उनके कर्मों का बन्धन बहुत कम होता है ।

प्रसङ्ग छठा

# दवा नहीं की

## (राजर्षि–सनत्कुमार)

सभी कहते हैं काया कच्ची है, कांच की गिलास है, मिट्टी की ढेरी है एवं देखते–देखते नष्ट होने वाली है। लेकिन थोड़ा-सा सर दर्द होते ही एस्प्रो की गोलियाँ खोजी जाती हैं, थोड़ा सा बुखार होते ही इन्जेक्शन की तैयारियाँ होने लगती हैं, और तो क्या जरा-सी बदहजमी होने पर भी फट–फट सोडे की बोतलें खोली जाने लगती हैं। अब कहिए, "काया कच्ची" कहने से क्या बना। वास्तव में काया कच्ची श्री सनत्कुमार चक्रवर्ती (जो श्री धर्मनाथ और शान्तिनाथ भगवान् के मध्य काल में हुए) ने समझी थी, एक जीभ से कितना-क कहा जावे! उन्होंने सात–सौ वर्ष तक अनेक भयंकर रोग सहन किए किन्तु दवा बिल्कुल नहीं की।

## देवों का आगमन

एक दिन स्वर्ग में इन्द्र ने कहा कि सनत्कुमार–चक्रवर्ती का जैसा रूप है वैसा आज दुनियाँ में किसी का नहीं है। यह सुन कर परीक्षार्थ दो मिथ्यादृष्टि–देवता वृद्ध–ब्राह्मणों का रूप बना कर आए। यद्यपि चक्रवर्ती उस समय स्नान कर रहे थे, फिर भी अति उत्सुकता जान कर उन्हें अन्दर आने दिया। आश्चर्यजनक रूप देख कर ब्राह्मण बोले; भाई! रूप तो वास्तव में रूप ही है, इसकी जितनी भी प्रशंसा की जाए थोड़ी है। चक्रवर्ती के मन में प्रशंसा सुन कर अहंकार हुआ, वे कहने लगे

अरे ! अभी क्या देख रहे हो, जब मैं सज-धज कर सभा मे बैठूं तब देखना । व्यवस्थित स्थान मे ब्राह्मण ठहरे और इधर महाराजा ने नहा-धो कर सदा की अपेक्षा कुछ विशेष शृंगार किए एव वे राजसभा मे विराज मान हुए ।

## रूप बिगड़ गया

ब्राह्मण आए किन्तु रूप देख कर नाक सिकोडते हुए कहने लगे । महाराज ! रूप तो बिगड गया, बिगड क्या गया, आपके शरीर मे कीडे भी पड गये । देखिए, पीकदानी मे जरा-सा थूक कर । साश्चर्य चक्रवर्ती ने थूक कर देखा तो बात सही थी बस, रग मे भग हो गया और सारा ही खेल बदल गया । चक्रवर्ती ने उसी क्षण राज्य-वैभव को त्याग दिया एव साधु बन कर अपने सुकुमार शरीर को तीव्र-तपस्या मे लगा दिया । रोग दिन-पर दिन बढते गये, अन्त मे गलितकुष्ट हो कर सारा शरीर सड गया, फिर भी मुनि ने बिल्कुल दवा नही की और मेरुवत् अडोल रह कर ध्यान एव तपस्या मे ही लीन बने रहे ।

## पुनः प्रशंसा

राजर्षि के अद्भुत धैर्य को देख कर इन्द्र ने देव-सभा मे पुन. कहा कि साधु ससार मे एक-एक से बढते-चढते हैं,लेकिन महर्षि-सनत्कुमार जैसे दृढ प्रतिज्ञ और धैर्यवान्मुनि आज दूसरे कोई नही हैं । लग-भग सात-सौ वर्षों से घोर-पीडा सहन कर रहे है, फिर भी कोइ दवा नही करते, अरे ! दवा तो करें ही क्या, दवा करने का मन भी नही करते । पहले वाले वे ही दो देवता परीक्षार्थ वैद्यरूप से उपस्थित हो कर प्रार्थना करने लगे । प्रभो ! कृपया हमारी औषधि लीजिए एव बीमारी का प्रतिकार करके इस शरीर को स्वस्थ कीजिए । दो-तीन बार करने पर ध्यान खोल कर मुनि बोले । भाई ! तुम शरीर की मिटाते हो या आत्मा की भी मिटा सकते हो ? वैद्य बोले,

महाराज ! आप भी तो आप ऐसे महारोग को मिटा सकते हैं, हम तो मात्र शरीर की ही बीमारी मिटाते हैं। यह सुनते ही राजर्षि ने अपने मुख से थूक अंगुली पर लगा कर सड़े हुए शरीर पर लगाई। लगाने भर की ही देरी थी कि उतनी जगह में उनका सारा शरीर कंचन-वर्ण होगया और देवता देखते ही रह गये। ऋषि बोले भाई ! तन की बीमारी मिटाने में क्या रखा है ? बड़ी बात तो मन की बीमारी मिटाने में है, अतः ध्यान एवं तपस्या द्वारा उसी का इलाज कर रहा हूँ। धन्य-धन्य कहते हुए देवता प्रकट हो गये और मुक्त कंठ से मुनि के गुणगान करते हुए स्वस्थान चले गये। मुनि ने एक लाख वर्ष संयम पाला और अन्त में केवल ज्ञान पाकर परम-पद को प्राप्त हुए। ऐसे उत्तम पुरुषों के स्मरण मात्र से निःसन्देह आत्म-कल्याण होता है।

## प्रसङ्ग सातवां

# मल्लि प्रभु

ज्ञानी कहते हैं कि इस शरीर मैं साढे तीन-करोड रू हैं और साढे छ करोड रोग हैं। ऊपर से चाहे कितने ही शृगार सभे जाए किन्तु अन्दर दुर्गन्ध ही दुर्गन्ध है। यह बात *मल्लिप्रभु* ने बहुत ही युक्ति से समझाई थी, और मोह-अन्ध छहो नरेशो को वैरागी बना दिया था।

मल्लि-प्रभु मिथिलापति *कुम्भ राजा* की रानी *प्रभावती* की एक रति-रूपा कन्या थी। यौवन आने पर उनकी सुरम्य नीलकान्ति की महिमा दूर-दूर तक फैल गई और बडे-बडे नरेश याचना करने लगे, किन्तु कुमारी ने बचपन से ही ब्रह्मचर्य स्वीकार .कर लिया था अत जो कोई भी विवाह—सम्बन्धी प्रश्न रखता था, *कुम्भ* नरेश इन्कार कर देते थे।

एक बार मल्लि कुमारी से जबरदस्ती विवाह करने के लिए अङ्ग कुणाल, काशी, कौशल, कुरु और पँचाल, ऐसे छ देशो के राजाओ ने एक ही साथ मिथिला नगरी पर घेरा डाल दिया और कुम्भ राजा से दूतो द्वारा कहलवाया कि या तो वे उन्हे अपनी पुत्री दे दें या लडाई करने को तैयार हो जाए।

## मल्लिकुमारी की युक्ति

मिथिलापति घबरा गए और चिन्तासमुद्र मे गोते लगाने लगे, क्योकि पुत्री तो किसी भी तरह विवाह करने को तैयार

मुनि मिल कर घोर-तपस्या कर रहे थे,तब मैंने आप के साथ तपस्या में कुछ माया (कपट) की थी अत तीर्थंकर रूप से अवतर कर भी मैं स्त्री बन गई। बस ! सुनते-सुनते ही छहो नरेशो को पूर्व-जन्म का ज्ञान हो गया और सारा खेल ही बदल गया।

## दीक्षा और मुक्ति

मल्लि-प्रभु ने सयम लिया और घाती-कर्मों का क्षय करके अरिहन्तपद को प्राप्त किया। इधर छहो राजा भी साधु बन कर प्रभु के आगे गणधर कहलाए। प्रभु सौ वर्ष तक घर मे रहे और नौ-सौ वर्ष सयम पाल कर *समेत शिखर* पर्वत पर गणधरो सहित मोक्षमे पधारे। जय हो ! जय हो ! श्री मल्लि प्रभु की।

## प्रभु की बरात

महाराज *उग्रसेन* की सुपुत्री *राजिमती* (जिसके साथ पिछले आठ जन्मो का प्रेम था) से श्री नेमिकुमार का सम्बन्ध किया गया और श्री कृष्ण–बलभद्र आदि यादव–नरेश एक विशाल बरात लेकर बडी धूम–धाम से उनका विवाह करने के लिए चल दिये। इधर महाराज उग्रसेन ने भी विवाह के शुभअवसर पर बडी जबरदस्त तैयारियाँ की। बारातियो के भोजनार्थ अनेक पशु-पक्षी तथा नाना प्रकार की अन्य भोजन-सामग्री एकत्र की। इधर राजकुमारी राजीमती अनेक सखियो के साथ रग-मण्डप मे अपने भावि-पति भगवान् अरिष्टनेमि की प्रतीक्षा करती हुई स्वकीय सौभाग्य की सराहना करने लगी

## परिवर्तन

राजकुमारनेमि ज्यो ही विवाह–मण्डप के पास आए त्यो हीं उन्होंने आक्रन्दन करते हुए अनेक पशु-पक्षीयो को देखा और सारथि से इसका कारण पूछा तब उसने कहा कि आप के विवाह मे इन सबका भोजन होगा। यह सुन कर कृपा–सिन्धु भगवान् ने सोचा, *यदि मेरे कारण इतने जीवों का वध हो रहा है तो यह विवाह मेरे लिए श्रेयस्कर नहीं होगा।* ऐसे विचार कर उसी समय वापस लौट चले। *अपनी आत्मा को पाप से बचाना*, वास्तव मे इसी का नाम सच्ची दया हैं; दया और मोह का भेद समझने वाले तत्त्व–ज्ञानी पुरुष विरले ही हैं।

## रंग में भंग

भगवान् के वापस फिरते ही रग मे भंग हो गया और हा हा कार मचगया। दोनो ही पक्षो के मुख्यपुरुषो ने काफी कुछ कोशिशें कीं लेकिन प्रभु ने एक भी नही सुनी। स्वस्थान आकर परम्परागत–व्यवहारानुसार वार्षिक दान दिया। जिसमे प्रति दिन एक करोड आठ

## प्रसङ्ग नौवां

# गुफा में ज्ञान के चाबुक

काले नाग के साथ खेलना मुश्किल है, मेरु पर्वत को हाथ पर उठाना कठिन है, समुद्र को भुजा से पार करना दुष्कर है, किन्तु इन सभी कार्यों से काम को जीतना कहीं लाखों-करोड़ों गुणा दुष्करतम है। बड़े-बड़े ऋषि-मुनि इसके आगे हार गये हैं भ्रष्ट हो गये हैं तथा अपना सर्वस्व खो बैठे हैं। लाख-लाख धन्यवाद तो उनको है जिन्होंने स्वय तो काम को जीता सो जीता ही, लेकिन महासती राजीमती की तरह दूसरो को भी ज्ञान के चाबुक मार कर रास्ते पर ला दिया।

## राजीमती और रथनेमि

राजीमती महाराजा उग्रसेन की पुत्री थी और भगवान् *अरिष्टनेमि* के साथ उसका विवाह निश्चित हुआ था, किन्तु भावीवश उसे बीच ही मे छोड कर प्रभु सयमी बन गये। पीछे से उनके छोटे भाई *श्री रथनेमि* ने राजीमती से विवाह की प्रार्थना की। सती ने कहा—देवर! मैं प्रभु की छोडी हुई हूं, अत. वमन के समान हू। क्या वमन को कौओ-कुत्तो के सिवा कोई भला आदमी खाता है? रथनेमि को वैराग्य हो गया और वे साधु बन कर घोर तपस्या करने लगे।

## गिरनार की तरफ

भगवान् अरिष्टनेमि को केवलज्ञान होने के बाद इधर राजीमती ने भी दीक्षा ली एवं वह साध्वियों मे मुख्या बनी। एक दिन साध्वी-

संघ के साथ प्रभु के दर्शनार्थ गिरनार पर्वत जा रही थी। अचानक जोर से वर्षा आ गई, साध्वियाँ इधर-उधर जहाँ भी स्थान मिला चली गई एवं राजीमती उस गुफा में जा कर अपने वस्त्र निचोड़ कर सुखाने लगी, किन्तु उनको पता नहीं था कि अन्दर रथनेमि मुनि ध्यान कर रहे हैं। अचानक बिजली चमकी और मुनि ने प्रकाश में राजीमती का अद्भुत रूप देखा।

## मन विचल गया

मुनि का मन विचल गया वे मुनि-पद का भान भूल कर भोग की प्रार्थना करने लगे। राजमती उनकी बात सुन शीघ्र ही वस्त्रों से अपने तन को ढांक कर अलौकिक साहसभरी वाणी से कहने लगी। मुने! आप कौन हैं? आप का कुल कितना पवित्र है? किस वैराग्य से आपने दीक्षा ली है? क्या सब कुछ भूल गये? जो ऐसी घृणित बात कर रहे हैं। मैं त्यागे हुए भोगों को स्वप्न में भी नहीं चाहती, आप तो क्या, साक्षात् कुबेर, इन्द्र और कामदेव भी आ जाए तो भी मैं परवाह नहीं करती। आप भ्रष्ट—साधु धिक्कार के अधिकारी हैं, जो मुनि वेश को लजा रहे हैं।

## मुनि होश में आये

महासती के वचनों से मुनि होश में आए और भगवान् के चरणों में जाकर दुष्कृत्य का प्रायश्चित्त कर के जन्म-मरण से मुक्त हुए। महासती राजीमती ने भी शुद्ध संयम पालन कर केवलज्ञान प्राप्त किया एवं भगवान् अरिष्टनेमि से चौवन दिन पहले सिद्ध गति को प्राप्त हुई।

—:※:—

## प्रसङ्ग दसवां

# श्री कृष्ण और बलभद्र

जो थोडी–सी ताकत पा कर अकड जाते हैं, जो दो पैसे कमाने पर फूल कर ढोल बन जाते हैं और दो चार बेटे–पोते होने पर जिन की आँखे जमीन पर नही टिकतीं। उन सज्जनो को *श्री कृष्ण* महाराज का जीवन अवश्य पढना चाहिए। जिनके जन्म-समय कोई गीत गाने वाला नही था और मध्य-समय सहस्रो नरेश एव देवता हाजिर रहते थे तथा अन्त-समय कोई रोने वाला भी पास नही मिला।

जैन इतिहासानुसार लग भग ८७ हजार वर्ष पूर्व श्री कृष्ण का जन्म मथुरा पुरी मे भाद्र कृष्ण अष्टमी की रात को हुआ था। एक दिन राजा *कस* की महारानी *जीवयशा* ने *अतिमुक्त* मुनि का हास्य किया, तब मुनि ने क्रुद्ध हो कर कहा कि इस *देवकी* (जो तेरी ननन्द है) का सातवाँ गर्भ तेरे पति को जान से मारेगा। रानी ने घबरा कर सारा हाल कंस को सुनाया और उसने छल करके *वसुदेवजी* से देवकी के सारे पुत्र माग लिए एवं बहिन-बहनोई को मथुरा मे ही रख लिया। पुत्र होते गए और कस उन्हे मारता गया।

### कृष्ण का जन्म

ऐसे छः पुत्र तो मर चुके अब श्री कृष्ण का जन्म-समय आया अत: कस के रखे हुए आरक्षक चारों तरफ चौकी लगाने लगे, किन्तु भावी-वश सब को नीद आ गई। जन्म होते ही रानी के आग्रह से पुत्र को ले कर महाराज वसुदेव चले और यमुना पार करके नन्दरानी *यशोदा* को वह निधान सौंप दिया एव उसके बदले मे उसकी नव जात पुत्री लेकर

पकडो! पकडो! ये ही मेरे दुश्मन है। बस, पापी चिल्ला ही रहा था कि कृष्ण ने दौड कर उसको पकड लिया और पृथ्वी पर पछाड कर यम के द्वार भेज दिया। फिर कस के पिता *राजा उग्रसेन* को (जो कंस ने कैद कर रखे थे) मुक्त बना कर मथुरा का राज्य दिया एव उनकी सुपुत्री *सत्यभामा* से विवाह करके वे सपरिवार *सौरिपुर* आ गये। इस समय यादव हर्ष से फूले नही समा रहे थे।

## फरियाद

इधर कस की महारानी रोती—पीटती अपने पिता के पास गई और उसने कृष्ण के द्वारा कस को मारे जाने की बात कही। बात सुनते ही राजा *जरासंध* ने वैर का बदला लेने के लिए अपने पुत्र *कालियकुमार* को ससैन्य भेजा। वह सौरिपुर आया तो यादव वहाँ नही मिले। पूछने पर पता लगा कि वे महाराज जरासन्ध के साथ वैमनस्य होने की वजह से शहर छोड कर सौराष्ट्र की तरफ भाग गये हैं। बस, कालियकुमार उनके पीछे—पीछे हो गया। जाते-जाते बहुत कम अन्तर रह गया तब यादवो की कुल देवी ने कृत्रिम चिताएं बना कर कालिय—कुमार से कहा कि यादव तेरे भय से जल कर पाताल मे चले गये। *मैं तो उन्हें पाताल से भी निकाल कर ले आऊंगा* ऐसे कह कर वह कृष्ण की चिता मे घुसा और देवी ने उसे भस्म कर दिया।

## द्वारका पुरी में कृष्ण

यादव सानन्द सौराष्ट्र पहुँच गये, वहाँ श्री कृष्ण के पुण्यो द्वारा इन्द्र के हुक्म से वैश्रवण देवता ने प्रत्यक्ष स्वर्ग जैसी *द्वारका*—नगरी बसाई और उसमे श्री कृष्ण राज्य करने लगे। उनके समुद्रविजय आदि नौ ताये थे, श्री वासुदेवजी पिता थे, भगवान् अरिष्टनेमि आदि अनेक ताये के पुत्र भाई थे। श्री बलभद्र आदि अनेक सगे विमातृज

पर पूरा-पूरा प्रतिबन्ध लगाया और जो थी उसे जगल मे डलवा कर नगर मे उद्घोषणा करवा दी कि कोई मदिरा-पान मत करो और त्याग-वैराग्य एवं तपस्या मे लीन बन कर आत्मकल्याण करो। विनाश बहुत ही समीप हैं, जिस किसी को भी सयम लेना हो अभी ले लो। पिछली चिन्ता मत करो। मैं सब की सम्भाल कर लूगा। इस उद्घोषणा से नगर मे बहुत त्याग-वैराग्य बढा। सहस्त्रो नर-नारियो ने प्रभु के पास दीक्षा स्वीकार की, कृष्ण की सत्य-भामा, रुक्मिणी आदि महारानियाँ, पुत्र एव पारिवारिक उनमे भी शामिल थे। कृष्ण ने इस समय की दलाली का बडा भारी लाभ उठाया।

## भवितव्यता नहीं टलती

एक दिन यादवकुमार क्रीडा करने वन मे गये और मदिरा पीकर उन्मत्त हो गये। शहर मे आते समय द्वीपायन-ऋषि को तपस्या करते देख कर बोले, अरे ! मारो मारो, यही है अपने शहर का नाश करने वाला। बस, फौरन धक्का-धूम करने लगे और ऋषि को नीचे पटक कर कांटो मे खूब घसीटा एवं अनेक दुर्वचन सुनाए। क्रुद्ध होकर ऋषि ने द्वारका-दहन का सकल्प कर दिया। पता पाकर श्री कृष्ण-बलभद्र ने आ कर बहुत अनुनय-विनय की ऋषि ने आखिर मात्र उन दोनो को छोडने का वचन दिया और रोते-रोते दोनो भाई हार कर घर आ गए।

## द्वारका-दहन

इधर द्वैपायन-ऋषि प्राण-त्याग कर अग्नि-कुमार देवता बना। ज्ञान से पूर्व-वैर का स्मरण करके द्वारका को भस्म करने आया, किन्तु आयविल-उपवासादि तपस्या के प्रताप से उसका बल न चला। छिद्र २ बारह वर्ष बीत गये। भावीवश लोगो ने तपस्या को बिल्कुल दिया और शत्रुदेव को मौका मिल गया। वह भीषण आग

## तीर लग गया

कृष्ण वृक्ष के नीचे पैर के ऊपर पैर धर कर सो रहे थे, अचानक तीर लगा और कृष्ण चौंक कर बोले, कौन है ? देखा तो जिसने भाई की रक्षा के लिए वनवास लिया था वही भाई जराकुमार सामने खडा खडा रो रहा है और माफी माँग रहा है। कृष्ण ने उसको सान्त्वना दे कर पाण्डवो के पास भेज दिया। अब जो तीर लगा था उससे भयंकर पीडा होने लगी एवं उसी कारण से श्री हरि के प्राण छूट गये। अजब है कर्मों का खेल; जिन के आगे देवता खड़े रहते थे उनको अन्त समय पीने को पानी तक नहीं मिला।

## राम की दीक्षा

कहीं से खोज कर श्री बलभद्र पानी ले कर आए तो आगे दीपक बुझ चुका था। काफी आवाजे देने पर भी श्री कृष्ण न बोले, फिर भी वे मोहवश कुछ नहीं समझे और छ: महीनो तक उनको उठाए फिरते रहे। आखिर देवो ने समझाया, तब शरीर का संस्कार किया और दीक्षा ले कर वन मे ध्यान करने लगे। जब कभी वहाँ खाना मिलता तो ले लेते अन्यथा भूखे ही रहते, लेकिन शहर मे न जाने का संकल्प कर लिया था वहाँ उनको जातिस्मरण ज्ञान वाला एक हिरन मिल गया था। वह वन में भिक्षा की दलाली करता रहता था।

## तीनों की सद्गति

एक दिन एक बढ़ई के रोटियां आई थी। मृग के साथ मुनि वहाँ गये एवं तक्षक उनको सहर्ष रोटियाँ देने लगा। मुनि ले रहे हैं, सुथार दे रहा है और हिरन उसकी प्रशंसा कर रहा है कि धन्य है इस दाता को जो ऐसे मुनि को शुद्ध भिक्षा दे रहा है। मैं भी यदि मनुष्य

## प्रसङ्ग ग्यारहवां

# धधकते–अँगारे

धन्य हैं *गजसुकुमाल* मुनि, जिन्हो ने दहदहाते–अँगारे डाल देने पर भी अपना सिर नही हिलाया और मुंह से आह तक नही की। देखिए जरा–सा क्षमा के आदर्श में अपना मुंह।

राजमाता देवकी के घर एक दिन भिक्षार्थ दो मुनि आए। देवकी ने भक्ति–पूर्वक उन्हे *केसरिया–मोदक* परसाये। थोडी देर बाद फिर आए, फिर सहर्ष लड्डू देकर उनका सम्मान किया, लेकिन तीसरी बार आने पर उस से रहा नही गया और लड्डू देकर ऐसे कहने लगी कि मुझे खेद है! जो मेरे शहर मे मुनियो को पूरी भिक्षा नही मिलती! अन्यथा एक ही घर मे तीसरी बार आने का कष्ट आपको क्यो करना पडता?

मुनि बोले—बहिन! हम तो पहली बार ही आए हैं, किन्तु समान रूप देख कर तू हमें पहचान नही सकी, ऐसे प्रतीत होता है। हम छहो भाई भद्दिलपुर–निवासी *नाग*–सेठ एव सुलसा–सेठानी के पुत्र हैं। विवाह के बाद नेमि–प्रभु की वाणी सुन कर हम साधु बन गये और छठ–छठ तपस्या करते हुए प्रभु के साथ विचर रहे हैं। मुनि की बात सुनने से माता देवकी को कंस द्वारा मारे गये अपने छहो पुत्र याद आ गए और वह फौरन भगवान् के पास जा कर अपने मृत-पुत्रो के विषय मे पूछने लगी। प्रभु ने कहा—ये छहो पुत्र तेरे ही हैं। कस के मार देने पर भी जीवित रह गये। देवता ने इनको मृत-वत्सा सुलसा के यहाँ रख दिया था और सुलसा के मृत–पुत्र तेरे पास रख दिए थे। अतः

गये । लघुभ्राता भी साथ हो गये । हरि ने देव वाणी का स्मरण करके उन्हें रोकना तो चाहा लेकिन वे नही रुके और प्रभु के समवसरण मे उपस्थित हो गये ।

## वैराग्य

प्रभु ने ज्ञान का ऐसा मेघ बरसाया जिस से गजसुकुमाल तो संसार से उद्विग्न हो कर दीक्षा लेने को ही तैयार हो गये । दीक्षा की बात सुन कर यादव-परिवार मे कोलाहल मच गया, माता वेहोश हो गई, श्री कृष्ण ने बहुत २ कहा, किन्तु कुमार तो टस से मस भी नही हुए । आखिर रोती हुई माता देवकी ने आज्ञा दी और बडी धूम-धाम से गजसुकुमाल ने नेमि प्रभु के पास दीक्षा स्वीकार कर ली ।

## श्मशान में ध्यान

दीक्षा लेते ही गजमुनि ने प्रभु से मुक्ति का सीधे से सीधा रास्ता पूछा, तब प्रभु ने श्मशान मे ध्यान करने के लिए कहा । एवमस्तु कह कर मुनि उसी वक्त श्मशान मे जा कर आत्म-ध्यान मे रमण करने लगे । सध्या के समय *सोमिल* ब्राह्मण ( जिस की कन्या इनके विवाहार्थं रखी हुई थी ) उधर से आ निकला । मुनि को देखते ही वह क्रोध से लाल हो गया, लाल भी इतना हुआ कि मुनि के सिर पर मिट्टी की पाल बान्ध कर धगधगते-अँगारे डाल दिए । खिचडी की तरह सिर सीझने लगा एव घोर वेदना होने लगी, किन्तु मुनि ने सर को हिलाया तक नही और वे परम पवित्र शुक्ल-ध्यान मे लीन हो गये । बस, सिर फटने के साथ ही कर्मों के बन्धन भी टूट गये और क्षमा के आदर्श गज-मुनि अजर-अमर एवं अविचल मोक्ष मे पधार गये ।

—: ❀ :—

# श्रीहरि का सवाल

एकदा अरिष्टनेमिभगवान् द्वारिका आए, श्री हरि दर्शनार्थ गये और वाणी सुन कर पूछा कि अठारह हजार साधुओ मे सर्वोत्कृष्ट कौन है ? प्रभु बोले ढढण-मुनि ! छ महीनो से उसने पानी तक नही पिया और आज उसको केवल-ज्ञान होने वाला है। वह तुझे जाते समय रास्ते मे ही मिल जाएगा, बस, सहर्ष कृष्ण चले एवं भिक्षार्थ फिरते हुए ढंढण-मुनि उन्हें मिले। कृष्ण ने सवारी छोड कर उन्हें सविधि वन्दना की। यह देख कर एक सेठ ने उनको बुला कर भिक्षा मे लड्डू दिए और मुनि लेकर प्रभु के पास आए।

प्रभु बोले—वत्स ! ये लड्डू कृष्ण की लब्धि के हैं क्योकि कृष्ण को वन्दना करते देख कर ही सेठ ने तुझे दिए हैं, इस लिए तेरे अभोज्य हैं। मुनि ने पूछा—प्रभो ! मैंने ऐसे क्या कर्म किए हैं, जो मुझे शुद्ध-आहार नही मिलता ? प्रभु ने कहा, तू पिछले जन्म मे एक बडा जमीदार था। तेरे पांच-सौ हल और हजार बैल थे। एक दिन खाने का समय होने पर भी तूने उन्हें नही छोडा, अत. उनके भोजन का विच्छेद होने से तेरा अन्तराय-कर्म बंध गया। इस समय तुझे वही कर्म फल दिखला रहा है। प्रभु की आज्ञा ले कर मुनि कही ईंटो के भट्टे मे लड्डू परठन गए और लड्डुओ को चूरते-चूरते शुक्ल ध्यान से उन्होने कर्मों को भी चूर दिया एव केवलज्ञान पा कर जन्म-मरण से मुक्त हो गये। धन्य है उनके धैर्य को, और दृढ-प्रतिज्ञत्व को।

—. ꙮ :—

## बचपन से ही वैर

कौरव-पाण्डव साथ ही रहते थे और वाल्य-लीला करते थे। भीम विशेष बलवान होने से दुर्योधन के भाइयो को प्रेम वश खेल-कूद मे खूब ही पटकता-पछाडता था किन्तु दुर्भावना नही थी, फिर भी दुर्योधन देख-देख कर जलता ही रहता था। कुछ बडे होने के बाद ये सब कृपाचार्य एव द्रोणाचार्य के पास पढने लगे। कर्ण भी वही आ गया और दुर्योधन का मित्र बन कर पाण्डवो से ( खास करके अर्जुन से ) पूरी शत्रुता रखने लगा। द्रोणाचार्य की कर्ण तथा अर्जुन विशेष भक्ति करते थे, फिर भी उन्होने अर्जुन से अधिक प्रसन्न हो कर उसे अद्वितीय-बाणावलि बनाया और राधा-वेध सिखाया।

## द्रौपदी का स्वयंवर

धृतराष्ट्र जन्मान्ध होने से महाराज-पाण्डु राज्य करते थे। कापिल्यपुर-पति राजा द्रुपद की पुत्री द्रौपदी का स्वयंवर हुआ, अनेक राजे-महाराजे आए, अर्जुन ने राधावेध किया एवं द्रौपदी ने उसके गले मे वरमाला पहनाई। किन्तु वह पूर्वकृत निदानवश पाँचो के गले मे दीखने लगी और सर्व-सम्मति से उन पाँचो के साथ द्रौपदी का विवाह हुआ। परस्पर कलह न हो इस लिए नारद के पास पाण्डवों ने प्रतिज्ञा कर ली कि द्रौपदी के महल में एक के होते दूसरा नहीं जाएगा। यदि कोई भूल से चला जाएगा तो उसे १२ वर्ष तक वनवास भुगतना पडेगा।

एक दिन अर्जुन से भूल हो गई और वह बन मे गया, वहाँ उसने अनेक विद्याएँ प्राप्त की एवं द्वारका जा कर कृष्ण की बहिन सुभद्रा से विवाह किया, उसका पुत्र वीर अभिमन्यु हुआ।

## युधिष्ठिर को राजगद्दी

वनवास भोग कर अर्जुन घर गया। महाराज-पाण्डु ने योग्य समझ कर युधिष्ठिर को राज्य दिया। अवसरज्ञ-युधिष्ठिर ने भाई दुर्योधन

## पाण्डव वनवास में

कर्म की अजब महिमा है, जिसने धर्मपुत्र जैसे धर्मिष्ठो का भी घर-बार छुडवा दिया। पाँचो पाण्डव, कुन्ती और द्रौपदी वन मे गए। द्रौपदी के पुत्रो को उनका मामा धृष्टद्युम्न ले गया एव सुभद्रा और अभिमन्यु को श्रीकृष्ण ले गए। वनवासी बनाकर भी दुर्योधन सन्तुष्ट न हुआ वारणावत नगरस्थ लाक्षागृह मे रख कर उन्हें भस्म करना चाहा, किन्तु चाचा विदुर की कृपा से सातो जीवित बच गए और उनके बदले दूसरे सात जीव मारे गये। वन मे फिरते समय भीम ने *हिडंब* एव बक राक्षस को मारा तथा *हिडम्बा* राक्षसी से विवाह किया, उसका पुत्र वीर *घटोत्कच* हुआ।

## दुर्योधन की दुष्टता

लाक्षागृह से बचे सुनकर दुर्योधन गोकुल देखने के बहाने फौज लेकर पाण्डवों को मारने वन मे गया, किन्तु वहाँ खुद ही पकडा गया और फिर उसे वीर अर्जुन ने छुडाया। पापी ने मौका पाकर कृत्या राक्षसी भिजवाई, लेकिन पुण्यों से पाण्डव बच गए, प्रत्युत वह भेजने वाले पुरोचन पुरोहित को खा गई। ऐसे ही अनेको कष्टो का सामना करते-करते बारह वर्ष बीत गए एवं अब वे गुप्त-रूप से विराट्नगर मे तेरहवा वर्ष व्यतीत करने लगे। धर्मपुत्र पुरोहित थे भीम रसोई दार थे, अर्जुन वृहन्नट (नपुसक) बनकर राज-कन्या उत्तरा को पढ़ाते थे, नकुल-सहदेव अश्वरक्षक एवं गो-रक्षक के रूप मे काम करते थे तथा द्रौपदी दासी के रूप मे महारानी के पास रहती थी।

## कीचक और मल्ल का वध

महारानी का भाई राजा कीचक द्रौपदी से कुछ छेड-छाड़ करने

कर कुरुक्षेत्र मे पहुँचे तथा द्रुपद–पुत्र धृष्टद्युम्न को सेनापति बना कर कौरवो की प्रतीक्षा करने लगे।

इधर भीष्म के सेनापतित्व मे द्रोण, कृप, कर्ण, शल्य, भगदत्त आदि वीरो से परिवृत ग्यारह–अक्षौहिणी दल युक्त दुर्योधन भी उपस्थित हुआ। अपने पितामह, गुरु, मामा एव भाईयो को देख कर अर्जुन रथ के पीछे आ बैठा एव श्री कृष्ण से कहने लगा कि मैं तो नही लड़ूगा। इस तुच्छ पृथ्वी के टुकडे के लिए गोत्र–हत्या करते मेरा दिल काप रहा है।

## श्री हरि की प्रेरणा

क्षत्रिय-धर्म के अनुसार अन्यायी को मारना कोई दोष नही, ऐसे कह कर श्री कृष्ण ने अर्जुन को उत्साहित किया एव कौरवो-पाण्डवो का युद्ध शुरू हुआ। नौ दिन तक भीष्म-पितामह ने पाण्डव सेना को खूब मारा, तब कृष्ण की सलाह से *शिखण्डी* को आगे करके दसवें दिन अर्जुन ने उनको गिरा दिया। ग्यारहवें दिन द्रोणाचार्य सेनापति बनकर पाण्डवो से खूब लडे। बारहवें दिन अर्जुन *संसप्तकों* से लडने गया, इधर राजा–भगदत्त पाण्डवो मे घुसा और मारा गया। तेरहवे दिन गुरु–द्रोण ने चक्रव्यूह रचा, अभिमन्यु अनेक वीरों के साथ उसमे प्रविष्ट हुआ और कर्ण, द्रोण, शल्य, कृप, अस्वत्थामा आदि ने उस वीर को बुरी तरह से घेर लिया एव जयद्रथ ने उसका सर काट लिया। चौदहवें दिन क्रुद्ध अर्जुन ने जयद्रथ को मार दिया, तब न्याय का भग करके द्रोण ने रात को अचानक हमला किया। उसमे कर्ण ने शक्ति से घटोत्कच को मारा और द्रोण ने विराट एव द्रुपद के प्राण लिए।

## आखिरी चार दिन

पन्द्रहवें दिन द्रोण को मरवाने के लिए श्री हरि की सलाह से

धर्मपुत्र ने 'अश्वत्थामा मृतः नरो वा कुंजरो वा' ऐसे असत्य बोला। पुत्र-वध सुन कर द्रोण ने शस्त्र फेंक दिए, और मौका पा कर द्रोण को धृष्टद्युम्न ने वहीं मार कर बाप का बैर ले लिया। सोलहवें दिन कर्ण के सेनापतित्व में दुःशासन को भीम ने मारा। सोलहवें–सत्रहवें दिन राजा शल्य को सारथी बना कर अर्जुन को मारने दौड़ा, किन्तु उसका रथ जमीन में धंस गया। ज्यों ही उसे वह निकालने लगा, अर्जुन ने फौरन उसका सिर काट लिया। अट्ठारहवें दिन शल्य के सेनापतित्व में दुर्योधन आदि लड़ने आए। धर्मपुत्र ने शल्य को, सहदेव ने जुआ खिलाने वाले पापी-शकुनि को एवं भीम ने दुर्योधन के अनेक भाइयों को मौत के घाट उतार दिया। इस प्रकार अपनी सेना का संहार देख कर दुर्योधन भाग कर एक तालाब में घुस गया।

## भीम और दुर्योधन का गदायुद्ध

काट कर अपने स्वामी के आगे लाकर रक्खे। बच्चो के सिर देख कर दुर्योधन ने कहा—अरे मूर्खो! इन बच्चो को मारने से क्या है? मेरे दुश्मन पाँचो पाण्डव तो जीवित ही हैं। हाय! हाय! मेरी तकदीर ऐसी कहाँ! जो मैं उन्हे मरे देखू, ऐसे दुर्ध्यान मे मर कर पापी सातवें नरक मे गया।

## सात और तीन बचे

अठारह दिन के युद्ध मे अठारह अक्षौहिणी सेना कटी। कहा जाता है कि पाण्डव पक्ष के सात बचे—श्रीकृष्ण, सात्यकि एव पाँचो पाण्डव तथा कौरव-पक्षीय तीन बचे-अश्वत्थामा, कृपाचार्य और कृतवर्मा। देखो एक दुष्ट दुर्योधन ने सारे कुल का सहार कर दिया, इसी लिए तो कहा जाता है कि *"कुमाणस आया भला, न जाया भला"* खैर जो कुछ होना था वह हो गया, किन्तु कहा यही गया कि पाण्डवो की जीत हुई और कौरवो की हार।

## राज्याभिषेक और देश-निकाला

श्री कृष्ण सहित विजयी-पाण्डव हस्तिनापुर आए, पिताजी के चरणो मे सिर झुकाया। शुभ मुहूर्त मे धर्मपुत्र का पुन. राज्याभिषेक हुआ और वे सानन्द राज्य करने लगे। द्रौपदी का रूप सुनकर एकदा *पद्मनाभ* राजा ने देवता द्वारा उसे मँगवा लिया। पता पा कर पाण्डवो सहित श्री कृष्ण लवण—समुद्र को लाघ कर *धातकीखण्ड* पहुँचे और नरसिंह रूप धार कर द्रौपदी को छुडा लाए। किन्तु हास्य के वशीभूत पाण्डवो ने गगा नदी मे नौका न भेजने के कारण कृष्ण क्रुद्ध हो गए और पाण्डवो को देशनिकाला देकर अभिमन्यु के पुत्र *परीक्षित* को हस्तिनापुर का राजा बना दिया। पाण्डवो ने श्री कृष्ण के कथनानुसार दक्षिण समुद्र के किनारे *पाण्डव—मथुरा* बसा कर वहाँ अपने दुःख के

प्रसङ्ग चौदहवां

# द्रौपदी के पाँच पति क्यों ?

किसी जन्म मे द्रौपदी *नाग श्री* ब्राह्मणी थी। उसने धर्मरुचि मुनि को कड़वे तूबे का शाक बहिराया एव नरक में गई। फिर ससार मे भ्रमण करती–करती एकदा वह सेठ की पुत्री *सुकुमालिका* हुई। फिर भी पाप के उदय से विष–कन्या थी, अत विवाह होने पर भी उसके शरीर का स्पर्श न कर सकने के कारण पति ने उसे छोड दिया। पिता ने एक भिखारी के साथ दुबारा भी शादी की, किन्तु उसके अग्नि-रूप शरीर से डर कर वह भी भाग गया अतः सुकुमालिका बाप के घर ही अपने दु.ख के दिन व्यतीत करने लगी।

## दीक्षा और आतापना

एक दिन सेठ के यहाँ भिक्षार्थ साध्वियाँ आईं उसने अपना दु'ख सुना कर उनसे कोई पुरुष–वशीकरण मन्त्र पूछा। सतियो ने ऐसे मन्त्र बताने से इन्कार कर दिया और उसे धर्मोपदेश सुनाया। तब दुःख की मारी वैराग्य पा कर वह साध्वी बन गई एव शहर के बाहर बाग मे जा कर सूर्य के सामने आतापना लेने लगी। गुरुआनी ने ऐसे खुले स्थान मे तपस्या करना अनुचित समझ कर काफी मनाही की लेकिन वह नहीं मानी।

## पांच पति का निदान

एक दिन जहाँ वह तपस्या कर रही थी, वहाँ एक वैश्या आई। उसके साथ पाँच-भोगी पुरुष थे जो उससे भोग कीप्रार्थना कर रहे थे। साध्वी की दृष्टि उन पर पड़ी और दिल मे विचार हुआ कि इसके पीछे पाँच-पांच पुरुष

## प्रसङ्ग पन्द्रहवां

# भगवान् पार्श्वनाथ

थोडी-सी सेवा करने वाले पर प्रेम और थोडा-सा कष्ट देने वाले पर द्वेष का होना प्राणि-मात्र के लिए स्वाभाविक-सा ही है। ऐसे आदर्श-पुरुष तो *पार्श्वनाथ* भगवान् जैसे कोई विरले ही मिलेंगे जिन्होंने प्राण बचाने वाले *नागराज-धरणीन्द्र* को और मरणान्त-उपसर्ग करने वाले कमठ-देव को एक ही दृष्टि से देखा।

आज से लग-भग उनत्तीस सौ वर्ष पूर्व तेईसवें तीर्थंकर भगवान् श्री पार्श्वनाथ ने *वाणारसी* नगरी मे राजा *अश्वसेन* की महारानी श्री *वामादेवी* की कुक्षि से जन्म लिया था और उनका विवाह राजा प्रसेन-जित् की सुपुत्री *प्रभावती* से हुआ था। एक दिन हजारो नगर निवासियो को एक ही तरफ जाते देख कर उन्होने अपने सेवक से उसका कारण पूछा। उसने कहा, कि कमठ नाम का एक बडा भारी तपस्वी आया है, वह शहर के बाहर पचाग्निसाधना कर रहा है, ये सब लोग उसी के दर्शनार्थ जा रहे हैं।

श्री पार्श्व-कुमार भी कुछ एक मित्रो के साथ वहाँ पधारे और उसकी हिंसात्मक साधना देखकर बोले—अरे हिंसाप्रिय तपस्वी-कमठ! *धर्म का मूल अहिंसा है* और तू धर्म के नाम से महाहिंसा कर रहा है। देख, तेरे इस तपस्या के साधन भूत लडके मे एक विशाल काय* नाग

---

*नोट—कई कथाकार एक नाग ही बताते हैं और मर कर उसका धरणीन्द्र होना मानते हैं।

आग-वगूला हो कर वैर का वदला लेने के लिए हर-समय छल-छिद्र देखने लगा।

## दीक्षा और उपसर्ग

इधर प्रभु तीस वर्ष गृहस्थाश्रम भोग कर सयमी वने एवं तपस्यार्थ वन मे पधारे। मौका पा कर कमठ-देवता आया और भयंकर भूत-पिशाच आदि का रूप वना कर उपसर्ग करने लगा। मरणान्त-उपसर्ग करने पर भी प्रभु ने अपने ध्यान को नही छोडा, तव देवता और भी क्रुद्ध हुआ तथा प्रलय का-सा मेघ विकुर्वित करके मूसलाधार पानी वरसाने लगा। पानी मे भगवान् का शरीर प्राय. डूव चुका था, ज्योही पानी नाक तक पहुँचा, अवधि, ज्ञान से जान कर शीघ्र ही *नाग-राज धरणीन्द्र* ने आ कर अपने इष्ट देव को ऊँचा उठा लिया। पानी वरसाने मे देवता ने हद कर दी, फिर भी प्रभु तो ऊँचे के ऊँचे ही रहे। आखिर धरणीन्द्र का भेद पा-कर कमठ घवराया एवं अपनी सारी माया समेट कर भगवान् के चरणो मे क्षमा मांगने लगा, लेकिन प्रभु तो अपने ध्यान मे लीन थे, उनके दिल मे न तो कमठ के प्रति द्वेष था, और न अपने परम भक्त नागराज के प्रति राग था, अहा कितना विचित्र था वह समता का दृश्य !

## केवल-ज्ञान

शुक्ल ध्यान से घातक कर्मों का नाश करके चौरासी दिन के वाद प्रभु ने केवल ज्ञान पाया एवं भाव-अरिहन्त वन कर चार तीर्थ स्थापित किये। उनके शासन-काल मे सोलह हज़ार साधु हुए अठत्तीस हज़ार साध्वियां हुईं, एक लाख चौंसठ हज़ार श्रावक हुए और तीन लाख उन्तालीस हज़ार श्राविकाएँ हुईं। प्रभु सत्तर वर्ष सयम पाल कर एक हज़ार मुनियो के साथ *सम्मेद-शिखर* पर्वत पर निर्वाण को प्राप्त हुए।

## प्रसङ्ग सोलहवां

# प्रदेशी के प्रश्न

स्वर्ग, नरक, पुण्य, पाप, आत्मा व परमात्मा को मानने वाला आस्तिक होता है और न मानने वाला नास्तिक होता है। *प्रदेशी* राजा नास्तिको का सरदार था, उसके दिल मे दया का निशान तक नही था और मनुष्य को मारना उसके लिए तिनका तोडने के समान था। *चित्त* नाम का विमातृज भाई उसका मन्त्री था, जो वड़ा भारी धर्मात्मा एव आस्तिक था।

## सावत्थी में केशी स्वामी

एकदा कार्य—वश वह सावत्थी नगरी गया, वहाँ श्री पार्श्वनाथ भगवान् के सतानिक—शिष्य *श्री केशी स्वामी* धर्म-प्रचार कर रहे थे, जो चतुर्ज्ञान—धारी थे। पता लगने पर चित्त—प्रधान ने उनका उपदेश सुना और श्रावक के व्रत ग्रहण किए। मन्त्री ने देश जाते समय गुरुजी से *श्वेताम्बिका* नगरी पधारने की प्रार्थना की, लाभ समझ कर केशी स्वामी वहाँ पधारे और राजा के वाग मे ठहरे। अवसर देख कर घोडो की परीक्षा के वहाने दीवान राजा को वाग में ले आया।

## ये जड़—मूढ़—मूर्ख कौन हैं ?

राजा ने दूर से मुनियो को देख कर पूछा—भाई ! ये जड—मूढ—मूर्ख कौन हैं ? मेरा सारा वाग रोक रक्खा है, अव मैं कहाँ उठूं और कहाँ वैठू ? मन्त्री ने कहा—ये जैनी साधु हैं एव स्वर्ग, नरक, आत्मा व पर—मात्मा को मानने वाले हैं। इनके मत मे जीव और काया पृथक्—पृथक् हैं।

४. राजा—मैंने एक चोर को कोठी मे वन्द कर दिया, कुछ समयानतर देखा तो मरा हुआ मिला। अव कहिए जीव कहाँ से निकला ? रास्ता तो वन्द था।

गुरु—जैसे वन्द मकान मे वजाए गये ढोल का शव्द वाहर निकलता है ,वैसे ही समझ लो।

५. राजा—आप के हिसाव से जीव सव वरावर हैं, तो जवान-आदमी के समान वालक तीर क्यो नही चला सकता ?

गुरु—वालक के हाथ पैर आदि शरीर के अवयव अपूर्ण हैं। क्या तुम नही जानते कि वाण विद्या मे निपुण पुरुप भी धनुप के उपकरण अपूर्ण होने पर तीर अच्छी तरह नही चला सकता ?

६. राजा—एक वूढा आदमी जवान जितना वोझा क्यो नही उठा सकता ?

गुरु—उसके अवयव जीर्ण हो गए, इसी लिए। क्या पुरानी-कावड मे युवक भी पूरा वोझा उठा सकता है ?

७. राजा—एक दिन मैंने जीवित चोर को तोला और मार कर फिर तोला किन्तु जीव का वोझ पूरा निकला। उसका वोझा क्यो नहीं घटा ?

गुरु—वायु के असख्य शरीर निकलने पर भी रवड के ढोल मे वोझ नही घटता, तो फिर अरूपी एक जीव निकलने पर वोझा कैसे घट सकता है ?

८. राजा—एक दिन मैंने काट-काट कर चोर के टुकडे कर दिए, लेकिन निकलता जीव नजर क्यो नहीं चढा ?

गुरु—तू लकड़हारे जैसा मूर्ख है। अरूपी जीव इन चर्म-चक्षुओ से कैसे देखा जा सकता है ?

९- राजा—यदि जीव वरावर है तो शरीर छोटे वड़े क्यो ?

## प्रसङ्ग सत्तरहवां

# भगवान् महावीर

सच्चे वीर वे ही होते हैं, जो कष्टो के समय भी औरो का सहारा नही लेते। किसी कवि ने कहा भी है .—

जो तैराक हैं दरिया का किनारा नही लेते,

जो मर्द है गैरो का सहारा नही लेते।

लेकिन ऐसे कहना जितना सरल हैं, काम पडने पर मजबूती रखना उससे कही लाखो गुणा कठिन है। कष्टो के समय किसी का सहारा न लेने वाले वीरो मे भगवान् *महावीर* एक प्रमुख वीर थे। जैन-जगत् मे ऐसा कौन व्यक्ति होगा जो उनका नाम नही जानता। इस अवसर्पिणी-काल मे भगवान् महावीर चौवीसवें तीर्थंकर थे।

प्रभु ने *क्षत्रिय कुण्डपुर* मे चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को माता *त्रिशला* की कुक्षि से जन्म लिया था। पिता *सिद्धार्थ* राजा थे, बडे भाई *नन्दी वर्धन* व बडी वहिन *सुदर्शना* थी। जब से महावीर माता *त्रिशला* के गर्भ में आए तभी से राज्य मे अन्न धन आदि हर एक वस्तु वढने लगी, इस लिए पिता ने अपने पुत्र का नाम *श्री वर्धमान* कुमार रक्खा। जन्म समय इन्द्रादि देवो ने भी परम्परागत रीति के अनुसार प्रभु का जन्म महोत्सव किया।

बचपन मे *आमलकी क्रीड़ा* के समय वल—परीक्षार्थ एक देवता अपनी पीठ पर वैठाकर प्रभु को आकाश मे ले गया, किन्तु क्का मारते ही रोता हुआ नीचे आ गया और क्षमा मांगकर

कहा कि आप घोर-परीषहो को समभाव से सहन करेंगे अत आपका नाम *महावीर* उपयुक्त है। ऐसे कह कर प्रशंसा करते हुए इन्द्रादि सब अपने-अपने स्थान को गए एवं प्रभु कर्मों का नाश करने के लिए घोर-तपस्या करने लगे। तपस्या कम से कम दो उपवास और ऊपर मे पक्ष, मास, दो मास, तीन मास, चार मास यावत् छ मास तक भी की। छद्मस्थ-काल भगवान् ने प्रायः तपस्या मे ही व्यतीत किया। बारह वर्ष तेरह पक्षो मे केवल ग्यारह महीने बीस दिन आहार लिया और ग्यारह वर्ष छ महीने-पच्चीस दिन निराहार रहे। तपस्या मे उन्हो ने पानी कभी नही पिया और प्राय. ज्ञान, ध्यान, मौन एवं योगासन ही करते रहे, साढे बारह वर्षों मे मात्र एक मुहूर्त नींद ली थी। प्रभु ने तपस्या के साथ साथ बडे बडे अभिग्रह किए, उनमे तेरह बोल का अभिग्रह बहुत ही उत्कृष्ट था, जो पाँच महीना पच्चीस दिन के बाद सती चन्दन *बाला* के हाथ से सम्पन्न हुआ था।

## उपसर्गों की झांकी

तपस्या के समय देवता, मनुष्य एवं तिर्यञ्चो द्वारा अनेक भीषण उपसर्ग किए गए, उनमें से कुछ एक नीचे दिये जा रहे हैं।

यक्षालय मे ध्यानस्थ अवस्था मे *शूल-पाणि* यक्ष ने अनेक उपद्रव किए।

चण्ड कौशिक साप की *बम्बी* पर ध्यान करते समय उस की दृष्टिविष साप ने तीन बार डंक मारा, उससे घोर पीडा हुई। लाट देश मे विहार करते समय तीन साल तक अनार्य लोगो ने अज्ञान एवं द्वेष के वश प्रभु को चोर डाकू कह कर अनेक प्रकारके बन्धनो से बाँधा और लकुटादिक से पीटा। कही उनके पीछे कुत्ते लगवाये गए, तो कही उनके पैरो पर खीर राधी गई।

दीक्षा ग्रहण करली। चार तीर्थों की स्थापना हुई, *गौतम* आदि चौदह हजार साधु हुए, *चन्दन-वाला* आदि छत्तीस हजार साध्वियां हुईं, *आनन्द* आदि एक लाख उनसठ हजार श्रावक हुए और *सुलसा* आदि तीन लाख अठारह हजार श्राविकाए हुईं।

प्रभु ने धर्म मार्ग मे जाति को महत्त्व न देकर गुण एव कर्म को ही मुख्य माना। हर एक जाति को उन्हो ने अपने सघ मे स्थान दिया। *उदायन, प्रसन्नचन्द्र* आदि वडे-वडे नरेशो ने *मृगावती चिल्लाणा* आदि महारानियो ने तथा *शिवराज, स्कन्धक* आदि सन्यासियो ने प्रभु के पास सयम स्वीकार किया और *श्रेणिक* आदि राजा उनके परम श्रद्धालु भक्त हुए।

भगवान् ने अहिसा को उत्कृष्ट धर्म वताया और यज्ञो मे होने वाली हिंसा का उग्र विरोध किया। तीस वर्ष तक विश्व को सन्मार्ग मे लगा कर राजा *हस्तपाल* की राजधानी *पावापुरी* मे अन्तिम चातुर्मास किया। कार्तिक कृष्णा त्रयोदशी को रात के वारह वजे प्रभु ने चौविहार-संथारा करके अमृत-वर्षिणी वाणी से लगातार सोलह पहर तक उपदेश दिया, जिसे अनेक देवता और मनुष्य सुनते रहे। ऐसे ज्ञान-सुनाते सुनाते कार्तिक कृष्णा अमावस्या रात के वारह वजे आठो कर्मों को खपाकर प्रभु निर्वाण को प्राप्त हो गए। निर्वाण-महोत्सव करने के लिये इन्द्रादि देवता आए, उनके विमानो के रत्नो के प्रकाश से अँधेरी अमावस्या भी *दिवाली* नाम का पर्व दिन बन गई। भगवान् महावीर की गद्दी पर *श्री सुधर्म स्वामी* (जो पांचवें गणधर थे) बैठाए गये।

-:※:-

भगवान् महावीर का वहाँ समवसरण हुआ। दर्शनार्थ इन्द्रादि-देवता आने लगे, उन्हें देखकर इन्द्रभूति कहने लगे, कि—ये सब देवता हमारे यज्ञ की आहुति लेने आ रहे हैं। किन्तु उन्हें ऊपर के ऊपर जाते देखकर तब उसने अपने साथियों से पूछा, तब किसी ने कह दिया कि एक इन्द्रजालिक ने आकर इन्द्र-जाल खोला है, ये सब उसी के पास जा रहे हैं। क्षुब्ध हो कर इन्द्र-भूति बोले—अरे! यह कौन-सा इन्द्रजालिक बाकी रह गया, जब कि—मैंने दुनियाँ भर के विद्वानो को जीत लिया।

## इन्द्रभूति प्रभु के पास

इस प्रकार विद्या के मद से गर्जते हुए इन्द्रभूति पाँच-सौ छात्रो के परिवार से ज्यो ही प्रभु के समवसरण में प्रविष्ट हुए, वे स्तब्ध से हो गए और सोचने लगे—क्या यह ब्राह्मण है? विष्णु है? महेश है? सूर्य है? चन्द्र है? इन्द्र है? या कुबेर है? नहीं! नही!! वे वे चिन्ह न होने से ब्रह्मादि तो नहीं है किन्तु सर्वज्ञ, सर्वदर्शी एवं वीतराग भगवान् महावीर है। अब क्या करूं? कहाँ जाऊं? इनका तेज आगे तो बढने नही देता और वापस जाने से बदनामी होगी। ऐसे विचार ही रहे थे कि प्रभु ने कहा—इन्द्रभूति! आ गए? बस अब तो आश्चर्य का पार ही नही रहा और अपने मन मे कहने लगे; यदि ये मेरी शंका का समाधान करदें तो मैं इनका शिष्य बन जाऊँ।

## द द द

सर्वज्ञ प्रभु ने गम्भीर स्वर से शीघ्र ही द द द इस वेद मन्त्र का उच्चारण किया और कहा—इन्द्रभूति! तुम्हारे दिल मे *जीव है या नहीं?* यह शंका है, किन्तु तुम्हारा यह वेदमन्त्र ही जीव की सिद्धि करता है। देखो इसमे एक द का अर्थ है दान। दूसरे द का अर्थ है दया तथा तीसरे द का अर्थ है दमन। अब सोचो-दान, दया और इन्द्रिय-दमन जीव करता है या जड़ पदार्थ?

## प्रसङ्ग सत्तरहवां

# भगवान् महावीर

सच्चे वीर वे ही होते हैं, जो कष्टो के समय भी औरो का सहारा नही लेते । किसी कवि ने कहा भी है —

> जो तैराक हैं दरिया का किनारा नही लेते,
> जो मर्द हैं गैरो का सहारा नही लेते ।

लेकिन ऐसे कहना जितना सरल हैं, काम पडने पर मजबूती रखना उससे कही लाखो गुणा कठिन है । कष्टो के समय किसी का सहारा न लेने वाले वीरो मे भगवान् *महावीर* एक प्रमुख वीर थे । जैन-जगत् मे ऐसा कौन व्यक्ति होगा जो उनका नाम नही जानता । इस अवसर्पिणी-काल मे भगवान् महावीर चौवीसवे तीर्थंकर थे ।

प्रभु ने *क्षत्रिय कुण्डपुर* मे चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को माता *त्रिशला* की कुक्षि से जन्म लिया था । पिता *सिद्धार्थ* राजा थे, बड़े भाई *नन्दी वर्धन* व बडी बहिन *सुदर्शना* थी । जब से महावीर माता *त्रिशला* के गर्भ मे आए तभी से राज्य मे अन्न धन आदि हर एक वस्तु वढने लगी, इस लिए पिता ने अपने पुत्र का नाम *श्री वर्धमान* कुमार रक्खा । जन्म समय इन्द्रादि देवो ने भी परम्परागत रीति के अनुसार प्रभु का जन्म महोत्सव किया ।

वचपन मे *आमलकी क्रीडा* के समय बल-परीक्षार्थ एक देवता अपनी पीठ पर बैठाकर प्रभु को आकाश मे ले गया, किन्तु मुक्का मारते ही रोता हुआ नीचे आ गया और क्षमा मांगकर

कहा कि आप घोर-परीषहो को समभाव से सहन करेंगे अत आपका नाम *महावीर* उपयुक्त है। ऐसे कह कर प्रशसा करते हुए इन्द्रादि सव अपने-अपने स्थान को गए एवं प्रभु कर्मो का नाश करने के लिए घोर-तपस्या करने लगे। तपस्या कम से कम दो उपवास और ऊपर मे पक्ष, मास, दो मास, तीन मास, चार मास यावत् छ मास तक भी की। छद्मस्थ-काल भगवान् ने प्राय· तपस्या मे ही व्यतीत किया। वारह वर्ष तेरह पक्षो मे केवल ग्यारह महीने बीस दिन आहार लिया और ग्यारह वर्ष छ महीने-पच्चीस दिन निराहार रहे। तपस्या मे उन्हों ने पानी कभी नही पिया और प्राय ज्ञान, ध्यान, मौन एव योगासन ही करते रहे, साढ़े वारह वर्षों मे मात्र एक मुहूर्त नीद ली थी। प्रभु ने तपस्या के साथ साथ वडे वडे अभिग्रह किए, उनमे तेरह वोल का अभिग्रह वहुत ही उत्कृष्ट था, जो पाँच महीना पच्चीस दिन के वाद सती चन्दन *वाला* के हाथ से सम्पन्न हुआ था।

## उपसर्गों की झांकी

तपस्या के समय देवता, मनुष्य एव तिर्यञ्चो द्वारा अनेक भीषण उपसर्ग किए गए, उनमे से कुछ एक नीचे दिये जा रहे हैं।

यक्षालय मे ध्यानस्थ अवस्था मे *शूल-पाणि* यक्ष ने अनेक उपद्रव किए।

चण्ड कौशिक साप की *वम्वी* पर ध्यान करते समय उस की दृष्टिविष साप ने तीन वार डक मारा, उससे घोर पीडा हुई। लाट देश मे विहार करते समय तीन साल तक अनार्य लोगो ने अज्ञान एव द्वेष के वश प्रभु को चोर डाकू कह कर अनेक प्रकारके वन्धनो से वांधा और लकुटादिक से पीटा। कही उनके पीछे कुत्ते लगवाये गए, तो कही उनके पैरो पर खीर राधी गई।

दीक्षा ग्रहण करली। चार तीर्थों की स्थापना हुई, *गौतम* आदि चौदह हजार साधु हुए, *चन्दन-वाला* आदि छत्तीस हजार साध्वियां हुई, *आनन्द* आदि एक लाख उनसठ हजार श्रावक हुए और *सुलसा* आदि तीन लाख अठारह हजार श्राविकाए हुईं।

प्रभु ने धर्म मार्ग मे जाति को महत्त्व न देकर गुण एव कर्म को ही मुख्य माना। हर एक जाति को उन्हो ने अपने सघ मे स्थान दिया। *उदायन, प्रसन्नचन्द्र* आदि वडे-वडे नरेशो ने *मृगावती चिल्लाणा* आदि महारानियो ने तथा *शिवराज, स्कन्धक* आदि सन्यासियो ने प्रभु के पास सयम स्वीकार किया और *श्रेणिक* आदि राजा उनके परम श्रद्धालु भक्त हुए।

भगवान् ने अहिंसा को उत्कृष्ट धर्म वताया और यज्ञो मे होने वाली हिंसा का उग्र विरोध किया। तीस वर्ष तक विश्व को सन्मार्ग मे लगा कर राजा *हस्तपाल* की राजधानी *पावापुरी* मे अन्तिम चातुर्मास किया। कार्तिक कृष्णा त्रयोदशी को रात के वारह वजे प्रभु ने चौविहार-संथारा करके अमृत-वर्षिणी वाणी से लगातार सोलह पहर तक उपदेश दिया, जिसे अनेक देवता और मनुष्य सुनते रहे। ऐसे ज्ञान-सुनाते सुनाते कार्तिक कृष्णा अमावस्या रात के वारह वजे आठो कर्मों को खपाकर प्रभु निर्वाण को प्राप्त हो गए। निर्वाण-महोत्सव करने के लिये इन्द्रादि देवता आए, उनके विमानो के रत्नो के प्रकाश से अँधेरी अमावस्या भी *दिवाली* नाम का पर्व दिन वन गई। भगवान् महावीर की गद्दी पर *श्री सुधर्म स्वामी* (जो पांचवें गणधर थे) वैठाए गये।

—:※:—

भगवान् महावीर का वहाँ समवसरण हुआ। दर्शनार्थ इन्द्रादि-देवता आने लगे, उन्हें देखकर इन्द्रभूति कहने लगे, कि–ये सब देवता हमारे यज्ञ की आहुति लेने आ रहे हैं। किन्तु उन्हें ऊपर के ऊपर जाते देखकर तब उसने अपने साथियो से पूछा, तब किसी ने कह दिया कि एक इन्द्रजालिक ने आकर इन्द्र–जाल खोला है, ये सब उसी के पास जा रहे हैं। क्षुब्ध हो कर इन्द्र–भूति बोले—अरे! यह कौन-सा इन्द्रजालिक बाकी रह गया, जब कि–मैंने दुनियाँ भर के विद्वानों को जीत लिया।

## इन्द्रभूति प्रभु के पास

इस प्रकार विद्या के मद से गर्जते हुए इन्द्रभूति पाँच-सौ छात्रो के परिवार से ज्यो ही प्रभु के समवसरण मे प्रविष्ट हुए, वे स्तब्ध से हो गए और सोचने लगे–क्या यह ब्राह्मण है? विष्णु है? महेश है? सूर्य है? चन्द्र है? इन्द्र है? या कुबेर है? नहीं! नही!! वे वे चिन्ह न होने से ब्रह्मादि तो नहीं है किन्तु सर्वज्ञ, सर्वदर्शी एवं वीतराग भगवान् महावीर हैं। अब क्या करूं? कहाँ जाऊं? इनका तेज आगे तो बढने नहीं देता और वापस जाने से बदनामी होगी। ऐसे विचार ही रहे थे कि प्रभु ने कहा–इन्द्रभूति! आ गए? बस अब तो आश्चर्य का पार ही नहीं रहा और अपने मन मे कहने लगे, यदि ये मेरी शंका का समाधान करदें तो मैं इनका शिष्य बन जाऊं।

## द द द

सर्वज्ञ प्रभु ने गम्भीर स्वर से शीघ्र ही द द द इस वेद मन्त्र का उच्चारण किया और कहा–इन्द्रभूति! तुम्हारे दिल मे *जीव है या नहीं?* यह शंका है, किन्तु तुम्हारा यह वेदमन्त्र ही जीव की सिद्धि करता है। देखो इसमे एक द का अर्थ है दान। दूसरे द का अर्थ है दया तथा तीसरे द का अर्थ है दमन। अब सोचो-दान, दया और इन्द्रिय–दमन जीव करता है या जड़ पदार्थ?

प्रसङ्ग उन्नीसवां

# महान् अभिग्रह फला

## चन्दनबाला

महासती *चन्दनबाला* ~~भगवान् महावीर की मौसी~~ महारानी *धारणी* की पुत्री थी। उसके पिता चम्पा नगरी के महाराज *दधिवाहन* थे। चन्दनबाला का जन्म-नाम *वसुमती* था। किन्तु विशेष शीतल होने के कारण उसको चन्दना एव चन्दनबाला कहा जाने लगा था। माता की शिक्षा पाकर राजकुमारी बहुत ही धार्मिक सस्कार वाली बन गई थी।

## आक्रमण

एक बार कौशाम्बि-पति राजा *शतानीक* ने चम्पा नगरी पर अचानक आक्रमण कर दिया। महाराज दधिवाहन भाग गए, दुश्मन की सेना ने तीन दिन तक शहर में लूट-खसोट की, जिसके जो कुछ हाथ लगा, ले भागा। एक सैनिक राज-महल मे आया और रूप से मोहित होकर रानी एव राजकुमारी को ले चला। वह इतना अधिक कामातुर हो गया कि जंगल मे ही जबरदस्ती अत्याचार करने की चेष्टा करने लगा। महारानी ने शील-भग का अवसर देख कर अपनी जीभ का बलिदान कर दिया।

## हाथ पकड़ लिया

माता के मरते ही चन्दनबाला भी जीभ खीच कर मरने लगी। सैनिक ने उसका हाथ पकड लिया और रोता हुआ अपने अपराध की क्षमा मांगने लगा तथा धर्म की पुत्री बना कर राजकुमारी को अपने घर

लाख मे खरीदा । ज्यो ही बालिका घर आई मूला सेठानी के आग लग गई और सैनिक की स्त्री के समान वह भी क्लेश करने लगी । एक दिन सेठ कार्यवश कही बाहर गाँव गया था । पीछे से मौका पा कर सेठानी ने घर के द्वार बन्द करके बालिका का सिर मूड दिया, वस्त्राभूषण खुलवा लिए, हाथो और पैरो मे हथकडियाँ और बेडियाँ पहना दी और घसीट कर एक कोठे में बन्द करके खुद अपने पीहर चली गई। सती ने माता पर फिर क्रोध नही किया, वह परम शान्त भाव से प्रभु का स्मरण करती रही ।

चौथे दिन सेठ आया और घर मे सुनसान देख कर घबराया एव बेटी ! बेटी ! कह कर चिल्लाने लगा । कोठा खोल कर ज्यो ही चन्दना को देखा, वह बेहोश हो कर बुरी तरह से रोने लगा । सती ने सान्त्वना देते हुए कहा—पिता जी ! मैं तीन दिन से भूखी हूँ अत कुछ खाना तो दीजिए, रोने से क्या होगा ! सेठ ने इधर—उधर देखा तो मात्र तीन दिन के राँधे हुए उडदो के बाकुले मिले । कोई बर्तन भी नही पाया अत छाज के कोने मे उन्हें डाल कर चन्दना को दिया और स्वय हथकड़ी—बेडी कटवाने के लिए लोहार को लेने गया ।

## अभिग्रह

उस समय भगवान् महावीर ने तेरह बातो का महान् अभिग्रह धारण कर रक्खा था । वह यह था, (१) देने वाली सदाचारिणी हो। (२) राज-कन्या हो । (३) खरीदी हुई हो । (४) उसका सिर मुंडा हुआ हो । (५) मात्र एक लगोटी पहने हो । (६) हाथों में हथकडी हो । (७) पैरो मे बेडी हो । (८) उसका एक पैर देहली के बाहर हो और एक अन्दर हो । (१०) छाज के कोने मे उड़द के बाकुले हो। (११) प्रसन्न हो । (१२) आँखों मे आँसू हों । (१३) तीसरा पहर हो।

पर दोनो तरफ बैठाया । समाचार सुन कर राजा *शतानीक* और रानी *मृगावती*, जो इसके मौसा-मौसी थे, आए एव अपराध की क्षमा मांग कर सती को राज महलो मे ले गये । फिर शीघ्रातिशीघ्र महाराजा दधि-वाहन जो कही भाग गये थे, पता लगा कर उन्हें लाए और क्षमा-याचना करके चम्पा का राज्य उनको वापस लौटाया ।

## दीक्षा

साढे बारह साल घोर तपस्या करके प्रभु सर्वज्ञ बने, गौतमादि चौतालीस-सौ पुरुषो ने दीक्षा ली । इधर चन्दनबाला भी भगवान् के चरणो मे पहुँची और अनेक सखियो के साथ दीक्षा ग्रहण की । भगवान् ने विशेष योग्य समझ कर उसे साध्वी-सघ की मुख्यता दी । बहुत वर्षों तक सयम पाल कर अंत मे आठो कर्मों का नाश करके वह महासती चन्दनबाला सिद्ध गति को प्राप्त हुई एवं सदा के लिए जन्म-मरण के बन्धनो से छूट गई ।

विकट समय मे धर्म की रक्षा कैसे करना, तथा दुःख मे सहन-शील बन कर धैर्य कैसे रखना आदि-आदि बाते चन्दनबाला की जीवनी से अवश्य सीखनी चाहिएँ ।

कर उष्ण तेजो-लेश्या छोड दी। गोशालक भस्म हो जाएगा ऐसा सोच कर प्रभु ने अपनी शीतल तेजो-लेश्या निकाली एव उष्ण-तेज को नष्ट करके उसको वचा लिया।

## लब्धि की विधि

गोशालक ने पूछा—भगवन्! इस लब्धि की विधि क्या है? प्रभु बोले, वेले-वेले निरन्तर छ मास तक तपस्या करके पारणे मे उबले हुए मुट्ठी-भर उडद और एक चुल्लू गर्म-पानी लेकर सूर्य के सामने आतापना लेने से यह लब्धि उत्पन्न हो सकती है।

कुछ समय के बाद भगवान् उसी मार्ग से वापस आए। तिल के बूटे वाला स्थान आते ही गोशालक ने कहा—देखिए भगवन्! तिल पैदा नही हुए हैं। प्रभु बोले-देख! तेरा उखाडा हुआ तिल का बूटा फिर से खडा हो गया है और दाने भी उसमे सात ही हैं। होनहार का यह अद्भुत-चमत्कार देख कर गोशालक *नियतिवाद* की तरफ झुक गया और उसने प्रभु से अलग हो कर घोर-तपस्या द्वारा तेजो-लब्धि प्राप्त की।

फिर श्री पार्श्वनाथ भगवान् के शासन से गिरे हुए छ साधु इसे मिले, उनसे उसने निमित्त-शास्त्र पढ़ कर दुनिया को सुख-दु:ख, हानि-लाभ और जन्म-मरण सम्बन्धी बातें बतलाई एव चमत्कार को नमस्कार वाली कहावत के अनुसार उसकी भक्त-मण्डली बहुत ज्यादा बढ गई। बढ क्या गई! भगवन् के होते हुए भी वह तीर्थंकर कहलाने लगा। भगवान् के श्रावक थे एक लाख उनसठ हजार। वह उद्यम को न मान कर मात्र होनहार को ही मानता था। उसका कहना था, कि—जो कुछ होना है वह ही होता है, उद्यम करना व्यर्थ है।

## सावत्थी में भीषण उत्पात

प्रभु से अलग होने के लग भग अठारह वर्ष बाद एक बार

अट-संट बोलने लगा। यह अनुचित वर्ताव देख कर क्रमश *सर्वानुभूति* और *सुनक्षत्र मुनि* रुक नही सके एवं कहने लगे—अरे गोशालक! अपने उपकारी धर्म—गुरु के साथ यह क्या व्यवहार कर रहे हो ? कुछ विचार तो करो ? ठहरो! ठहरो !! करता हूँ विचार, ऐसे कह कर क्रोधी ने तेजो—लेश्या छोड दी, उससे वे दोनो मुनि भस्मसात् हो गये और क्रमशः आठवें एवं बारहवें स्वर्ग मे गये। फिर हित शिक्षा देने से प्रभु पर भी उसी शक्ति का प्रयोग करता हुआ बोला—ओ महावीर! मेरे इस तेज से जल कर छः महीनों के अन्दर ही तुम मर जाओगे। प्रभु ने कहा—गोशालक! मैं तो सोलह वर्ष तक सानन्द विचरूंगा, किन्तु तेरे अपने ही तेज से जल कर तू आज से सातवें दिन मृत्यु को प्राप्त होगा!

ठीक ऐसा ही हुआ। यद्यपि उसके तेज से प्रभु का शरीर शकर-कद की तरह सिक गया और उसके कारण आप छः मास तक उपदेश नही कर सके। लेकिन इतना कुछ होने पर भी शरीर वज्रमय था अत वह तेज उस के अन्दर नही घुस सका और लौट कर अपने मालिक गो-शालक के ही शरीर मे जा घुसा। उसके शरीर मे आग—आग लग गई, वह विभ्रान्त—सा हो गया, साधुओ के पूछे हुए प्रश्नो का कुछ भी जवाब नही दे सका और चुप-चाप अपने स्थान को लौट गया। अपने धर्माचार्य की यह दशा देख उसके अनेक शिष्य उसे झूठा समझ कर भगवान् की शरण मे आ गए।

## भावना बदल गई

गोशालक मन मे तो जान ही रहा था कि भगवान् सच्चे हैं और मैं झूठा हूँ। लेकिन शिष्यो के चले जाने से तथा शरीर मे दाह लगने से अब उसकी भावना और भी बदल गई। वह अपने किए हुए काले कारनामों को स्मरण कर कर रो पड़ा और अन्त मे अपने मुख्य श्रावकों

## प्रसङ्ग इक्कीसवां

# किज्जमाणे कडे

## (जमालि)

भगवान् महावीर का कथन हैं "किज्जमाणे कडे "अर्थात् जो काम करना शुरू कर दिया वह "किया" ही कहलाता हैं क्योंकि कितने कम अंश मे तो वह हो ही चुका। जैसे यदि कोई किसी गाव को लक्ष्य करके चल पडा उसे गाँव गया कहा जाता है। ऐसे ही कपडा बुनना शुरू हो गया उसे बुना ही कहते हैं। जमालि इसी विषय पर सन्देह करके पतित हुआ था।

जमालि भगवान् महावीर का ससार-पक्षीय दामाद था। प्रभु की वाणी सुनकर पाच-सौ क्षत्रिय-कुमारो के साथ उसने दीक्षा ली थी। उसकी पत्नी "प्रियदर्शना" भगवान् की पुत्री थी वह भी हजार स्त्रियो के परिवार से साध्वी बनी थी। दीक्षा का विस्तृत वर्णन भगवती सूत्र मे हैं।

## जमालि के शंका

ग्यारह अग पढ कर जमालि प्रभु की आज्ञा से पांच-सौ साधुओ का मुख्य बन कर विचरने लगा। इधर महासती-प्रियदर्शना-भी एक हज़ार साध्वियो के परिवार से गाँवों नगरों मे धर्म का प्रचार करने लगी। एक बार जमालि मुनि सावत्थी नगरी के "तिन्दुक" वन मे ठहरा हुआ था। कुछ अस्वस्थता के कारण अपने साधुओ से संथारा-बिछौना बिछाने के लिए कहा। वे बिछा रहे थे कि व्याकुलतावश

और जीव शाश्वत हैं या अशाश्वत ! जमालि उत्तर नही दे सका तबप्रभु ने फरमाया कि मेरे कई छद्मस्थ शिष्य इस प्रश्न का उत्तर दे सकते हैं। तू कहता है' मैं केवली हू' तो फिर चुप क्यो खड़ा है ? फिर भी चुप ही रहा' तब भगवान् बोले' सुन ! द्रव्यो की अपेक्षा से संसार और जीव शाश्वत हैं तथा पर्याय की अपेक्षा से अशाश्वत हैं !

## हठ नहीं छोड़ा

जमालि शर्मिंदा हो कर चुप चाप चला गया' किन्तु अभिमान वश अपना दुराग्रह नही छोडा और असत्य प्ररूपणा करके दुनियाँ को बहकाता ही रहा। सम्यक्त्व से शून्य होने पर त्याग और तपस्या के बल से मर कर छटे स्वर्ग मे किल्विषी– हीन–जाति का देवता बना। वहाँ से च्यव कर ससार मे भ्रमण करेगा और अन्त मे कर्मों का नाश कर के मोक्ष पाएगा। कारण, एक वार सम्यग्दर्शन की प्राप्ति हो गई थी।

## प्रसङ्ग बाईसवां

# श्री जम्बू स्वामी

वास्तव मे त्यागी वही है जो प्राप्त-भोगों को ठोकर मारता है, सन्तोषी वही है जो प्राप्त–धन को छोड़ता है, क्षमा–वान् वही है जो आए हुए गुस्से को दबाता है और मर्द वही है जो मार सकने पर भी नही मारता। श्री *जम्बू स्वामी* के त्याग एवं वैराग्य की कहाँ तक प्रशसा की जाए, जिन्हो ने शाम को आठ–आठ सुन्दरियो से विवाह किया और सबेरे संयम ले लिया। सयम भी अकेलो ने नही लिया, किन्तु पाँच–सौ सत्ताईस के साथ लिया था ।

## जन्म और वैराग्य

राज गृह नगर मे ऋषभदत्त सेठ था। *धारणी* सेठानी थी और उनके जम्बूकुमार नामक एक पुत्र था। वह पढ–लिख कर तैयार हुआ, बड़े बड़े रईसो की आठ– पुत्रियो से उस का सम्बन्ध किया गया एवं विवाह भी निश्चित हो गया। केवल एक ही दिन की देरी थी कि अचानक भगवान् श्री महावीर के पट्टधर शिष्य श्री *सुधर्म-स्वामी* वहाँ पधारे अपना अहो भाग्य मानते हुए हज़ारो नगर निवासी दर्शनार्थ उपस्थित हुए, जिन मे जम्बूकुमार भी शामिल थे। सुधर्म-स्वामीने अपनी ओजस्विनी वाणी मे संसार को निस्सार कहा, विषय-विलासो को दूर के लड्डू के समान कहा तथा भौतिक सुखो को मृग–मरीचिका की उपमा दी। यह सुन कर जम्बू-कुमार वैराग्य भावना से ओत-प्रोत हो गए एवं गुरुजी से प्रार्थना करने लगे– प्रभो ! संसार झूठा है, मैं इस से उद्विग्न हो गया हू अतः साधु बनूगा। यो कह कर आजीवन ब्रह्मचारी रहने का

एवं प्रकट होकर कहने लगा। अरे जम्बू! क्या इन दिव्य–भोगो को तथा इन अप्सराओ को छोडना योग्य है क्या वृद्ध माता–पिताओ को रुलाना शोभा देता है? नही, नही, तेरे जैसे विवेकी के लिए कदापि नही!

## जम्बू का जवाब

अरे प्रभव! मुझे तो क्या समझाने आया है? सुधर्म–गुरु ने मेरी आखें खोल दी हैं, अब मैं समझ गया हु कि, विषय–सुख अपार दुःखो से घिरी हुई एक शहद की बूद है, इन अप्सराओ का और माता पिताओ का प्रेम अनन्त मुक्ति सुखो को रोकने वाला है एव तू जिस धन के लिए भटक रहा है वह भी यही रह जाने वाला है। प्यारे प्रभव! त्याग दे इस ससार की माया को! बस, बातो ही बातो मे सूर्य उदय हो गया और चोर नायक प्रभव भी उनके साथ दीक्षा के लिए तैयार हो गया।

## दीक्षा और निर्वाण

दूसरे चोर भी संयम लेने को तैयार हो गए तथा वर कन्याओ के माता-पिता भी। पांच सौ सत्ताईस के परिवार से श्री जम्बू कुमार ने सानन्द दीक्षा ली और श्री सुधर्म–स्वामी के पट्टधर हुए अस्तु! इस भरत क्षेत्र मे अन्तिम केवली भी ये ही थे।

—:※:—

वदल गया है, अत अव वह तेरे पुत्र को राज्य-भ्रष्ट कर देगा। वस, ऐसे सुनते ही राजर्षि भान भूल कर मन ही मन मन्त्रियो से घोर-युद्ध करने लगे।

## क्या गति होगी?

राजा श्रेणिक ने भी ध्यानस्थ मुनि को सिर झुका कर फिर प्रभु के दर्शन किए और पूछा। भगवन्! घोर-तपस्या करने वाले राजर्षि-प्रसन्नचन्द्र की क्या गति होगी? प्रभु वोले, यदि इस समय आयुष्य पूर्ण करें तो सातवी नरक मे जाएँ। क्या सातवी नरक? नही! नही! अब छटी नरक। राजा के दिल मे आश्चर्य का पार नही रहा अत वार-वार यही सवाल करने लगा और प्रभु पाँचवी, चौथी यावत् एक-एक नरक घटाने लगे तथा फिर तिर्यञ्च, मनुष्य, व्यन्तर, भवन-पति, ज्योतिषी एव प्रथम-स्वर्ग वताने लगे। ज्यो ज्यो प्रश्न होता, एक एक स्वर्ग वढ जाता। अत मे प्रभु ने फरमाया कि इस समय यदि राजर्षि की मृत्यु हो तो छव्वीसवें स्वर्ग मे जाएँ।

## गति में इतना फेर फार कैसे?

आश्चर्य-चकित राजा श्रेणिक ने पूछा, प्रभो! कुछ समझ मे नही आया कि आपने गति मे इतना फेर-फार कैसे किया, कृपा हो तो जरा तत्त्व वतलाइए। प्रभु वोले, राजन्! जव ध्यानस्थ-प्रसन्नचन्द्र अपने मन्त्रियो से घमासान-युद्ध कर रहे थे एव रौद्र-परिणामो से उन्होंने सातवीं नरक के कर्म इकठे कर लिए थे, अत मैंने सातवी नरक कही थी। लडते-लडते उन्होंने मन ही से सारी आयुधशाला खत्म करदी और कोई शस्त्र नही रहा, तव शिरस्त्राणका चक्र वना कर मन्त्रियो को मारने के लिए सिर पर हाथ डाला, तो वहाँ केस भी नही थे, शिर-स्त्राण का तो होना ही क्या था? मुण्डितसिर को देखते ही मुनि सम्भले एव होश मे आ कर सोचने लगे। हाय! हाय! मैं तो साधु हूँ किस का पुत्र और किसका राज्य! रहे तो क्या और जाए

प्रसङ्ग चौबीसवां

# आदर्श-क्षमादान

सभी कहते हैं कि वैर-जहर बुरा है, किन्तु मौका पडने पर शत्रु को क्षमा देने वाले वीर इने गिने ही मिलते हैं।

*वीतभय* नगर मे तापस-भक्त *उदायन* नाम के महाराज थे। दश मुकुट बन्ध राजा उनकी सेवा करते थे और सोलह देश उनके मातहत थे। उनकी पटरानी का नाम *प्रभावती* था जो भगवान् की परमभक्ता-श्राविका थी एवं महाराज चेटक की पुत्री थी। रानी के कारण से ही महाराज जैनधर्म के प्रति श्रद्धालु बने थे। श्रद्धालु नाम के ही नही थे वल्कि उन्हो ने जैनधर्म का तल-स्पर्श तत्त्व भी समझ लिया था।

## क्षमा दान का अवसर

एक बार उज्जयिनी-पति महाराज चण्ड प्रद्योतन ने उदायन की दासी "स्वर्ण गुलिका" का अपहरण कर लिया। समझाने पर भी नही समझा और बात यहाँ तक बढ गई कि बडी भारी सेना ले कर ग्रीष्म ऋतु मे उन को युद्ध करने के लिए जाना पडा। भयंकर युद्ध हुआ। आखिर *अन्यायी की जीत हुई, प्रद्योतन पकडा गया और मालव देश मे महाराज* उदायन की सत्ता स्थापित की गई। इतना ही नही क्रोध-वश उन्हो ने अपराधी को "मम दासी पति" ऐसे अक्षरो के दाग से दागी भी बना दिया तथा उसे बन्दी रूप से लेकर वे अपने देश को रवाना हुए। मार्ग मे संवत्सरी आ गई अत वन मे कैंप लगाए गए। धर्म-प्रिय महाराज उदायन ने उपवास पौषध एवं सांवत्सरिक-प्रतिक्रमण किया। चौरासी

## प्रसङ्ग पच्चीसवां

# एक झोंपड़ी बची

कह तो हर एक देते हैं कि क्षमा करनी चाहिए, किन्तु अपना अपमान देख कर किसको क्रोध नही आता ? स्वार्थ-भग होने पर किस की आँखें लाल नही होती ? इसी लिए तो कहा गया है कि *क्षमा वीरस्य भूषण* धन्य है राजर्षि—*उदायन* को जिन्होने शान्त भावों से प्राणो की बलि चढा दी, लेकिन हत्यारे के प्रति क्रोध को चमकने तक नही दिया।

## भगवान् का पादार्पण

एकदा भगवान् महावीर सात-सौ कोस का विहार करके महाराज उदायन को तारने के लिए वीतभय-पत्तन मे पधारे। प्रभु की सुधावर्षिणी देशना सुन कर चरमशरीरी उदायन-नरेश सयम लेने के लिये तैयार हो गए। राज्य का अधिकारी यद्यपि उनका प्रिय-पुत्र *अभीचकुमार* ही था, किन्तु मेरा पुत्र राज्य मे गृद्ध बन कर कही नरकगामी न बन जाए, ऐसे सोच कर उन्होने अपना राज्य पुत्र को नही दिया।

## भानजे को राज्य

*केशीकुमार* नामक भानजे को राज्य देकर महाराज साधु बन गए, योग्यता प्राप्त करके प्रभु की आज्ञा से वे एकाकी विचरने लगे एव मास-मास खमण की घोर तपस्या करने लगे। तपस्या के कारण उनका शरीर रूखा-सूखा एव रुग्ण हो गया। ग्रामो-नगरो मे विचरते एक बार वे अपनी जन्म भूमि मे पधार गए।

प्रसङ्ग छब्बीसवां

# अभीचकुमार का क्रोध

बन्धुओ! परम्परागत रूढि के अनुसार यद्यपि आप लोग सबसे खमत खामना करते हैं किन्तु ध्यान देकर देखिए कि जिन के साथ अनबन है, बोल-चाल बन्द है या कोर्ट मे मामला चल रहा है उनसे क्षमा माँग कर मन को शुद्ध बनाते हैं या नही? यदि नही, तो आप के खमत-खामते मात्र ढोंग हैं? क्या आप नही जानते कि एक उदायन से मन मे द्वेष रख कर *अभीच कुमार* डूब गया और वैमानिक-देवता बनने के बदले असुर-योनि मे उत्पन्न हो गया?

अभीचकुमार महाराज उदायन का पुत्र था। भगवान् महावीर का परम-भक्त था एव बारह व्रतधारी श्रावक था किन्तु महाराज ने योग्य होने पर भी अपना राज्य उस को न दे कर केशी कुमार भानजे को दे दिया। इससे उस को बहुत दुःख हुआ और राजा के सयम लेते ही अपने शहर को छोडकर चम्पा-नगरी चला गया। वहाँ राजा *कुणिक* जो इसकी मौसी का पुत्र भाई था, उसके पास रहकर दुःखमय जीवन बिताने लगा।

यद्यपि सामायिक- प्रतिक्रमण आदि हर रोज करता था, निर-तिचार श्रावक व्रत पालता था, हर एक के साथ अच्छे से अच्छा व्यवहार करता था, फिर भी महाराज उदायन के साथ इतना द्वेष था कि उन का नाम आते ही आँखो मे खून बरसने लग जाता था। ससार के सब जीवो से खमत-खामना करता था लेकिन उदायन नाम से नही करता। ऐसे अनन्तानुबन्धी- क्रोध के कारण वह पूर्वोक्त क्रिया-काण्ड करता हुआ भी मिथ्यादृष्टि बन गया एवं विराधक हो कर ससार मे भटक गया।

—समाप्त—